Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

SANSKRIT SAHITYA PARISHAD SERIES No. 2

KALI-TANTRAM

Sanskrit Sahitya Parishad
SHAMBAZAR, CALCUTTA

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

gitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalga

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

भारते भातु भारती

संस्कृतसाहित्यपरिषद्ग्रन्थावली २ नं

काकौतन्त्रम्

सटीप्पणम् वङ्गभाषानुवादसमेतञ्च

संस्कृतसाहित्यपरिषदन्यतमोपाध्याय·
श्रीयुतसतीशचन्द्रसिद्धान्तभूषणभट्टाचार्य-
सम्पादितम्।

संस्कृतसाहित्यपरिषद्
श्यामबाजार, कलिकाता।

मूल्यम् ॥/० दशानकम्।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

प्रिण्टार—श्रीकुलचन्द्र दे
शास्त्रप्रचार प्रेस, ५नं छिदामसुदिर लेन,
कलिकाता ।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

উৎসর্গপত্র

হাওড়া রামকৃষ্ণপুরনিবাসী, স্বধর্ম্মনিরত পরিষদের অন্যতমসদস্য,
বিদ্বদ্বর, শ্রীযুক্ত শ্যামসুন্দর ঘোষ মহোদয় কালীতন্ত্র
প্রকাশের ব্যয়ভার বহন করিয়াছেন।
কৃতজ্ঞতার চিহ্নস্বরূপ তাঁহারই করে
এই গ্রন্থ অর্পিত
হইল।

সংস্কৃতসাহিত্যপরিষৎসম্পাদক—
শ্রীপশুপতিনাথ শাস্ত্রী
শ্রীগীষ্পতিরায় চৌধুরী কাব্যতীর্থ

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

gitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalga

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

ভূমিকা

সংস্কৃতসাহিত্যপরিষৎকর্ত্তৃপক্ষগণ অনুবাদ ও ব্যাখ্যার সহিত কালীতন্ত্র সম্পাদন করিবার ভার আমার উপর অর্পণ করিয়াছেন। কালীপূজা বিষয়ে কালীতন্ত্র অতি প্রামাণিক মূলতন্ত্র। তন্ত্রসার, শ্যামা-রহস্য প্রভৃতি নিবন্ধে কালীতন্ত্রের বচন উদ্ধৃত হইয়াছে, অথচ কালীতন্ত্র আজ পর্য্যন্ত কোথাও মুদ্রিত হয় নাই; এই জন্যই পরিষৎ ইহার প্রকাশে হস্তক্ষেপ করিয়াছেন। আমিও ইহার সম্পাদনে যথাশক্তি যত্নের ত্রুটি করি নাই। আমার মত অজ্ঞের পক্ষে এইরূপ দুরূহ কার্য্যে ভ্রমপ্রমাদ, ত্রুটিবিচ্যুতি অনিবার্য্য, সুধীগণ তাহা ক্ষমা করিবেন।

ধানুকানিবাসী শ্রীযুক্ত পার্ব্বতীচরণ শাস্ত্রিমহাশয় তিনখানা প্রাচীন হস্তলিখিত কালীতন্ত্র দিয়াছেন, আর পরিষদের একখানা কালীতন্ত্র, এই চারিখানা পুস্তক দৃষ্টে পাণ্ডুলিপি প্রস্তুত করিয়াছি। চারিখানা পুস্তকই অশুদ্ধিবহুল, তন্মধ্যে শাস্ত্রিমহাশয়ের প্রদত্ত "ক" সংজ্ঞক পুস্তকখানা অপেক্ষাকৃত শুদ্ধ ও প্রাচীন। বহুপূর্ব্ব হইতেই তন্ত্রের অধ্যয়ন, অধ্যাপনা লোপ পাইয়াছে, কাজেই শুদ্ধ পুস্তক দুর্লভ। "ঘ" সংজ্ঞক পুস্তকখানা পরিষদের সম্পত্তি, এইখানা অত্যন্ত অশুদ্ধ। পাঠান্তরস্থলে সঙ্গত পাঠ মূলে দিয়াছি, অন্য পাঠ নিম্নে পাঠান্তরে সন্নিবেশিত করিয়াছি। যে পাঠ সকল পুস্তকেই অশুদ্ধ বলিয়া বোধ হইয়াছে, তাহাও স্বপ্রতিভাবলে শুদ্ধ করিবার চেষ্টা করি নাই। তন্ত্রসার, শ্যামারহস্য প্রভৃতিতে উদ্ধৃত কালীতন্ত্রবচনে যে সকল পাঠান্তর লক্ষিত হইয়াছে, টিপ্পণীতে তাহার উল্লেখ করিয়াছি। একাদশ পটলের শেষেই গ্রন্থসমাপ্তিসূচক ফলশ্রুতি দেখিতে পাওয়া যায়, তাহাতে একাদশ পটলেই গ্রন্থ সমাপ্ত বলিয়া বোধ হয়। ক খ গ পুস্তকে একাদশ পটলেই সমাপ্তি। ঘ পুস্তকে অশুদ্ধিবহুল দ্বাদশ পটল দেখিতে পাওয়া যায়, এবং তাহার পরে "সমাপ্তঞ্চেদং কালীতন্ত্রম্" এইরূপ লিখিত আছে।

প্রথম পটলে দক্ষিণাকালীর দ্বাবিংশত্যক্ষর মন্ত্র উদ্ধৃত করিয়া তাহার পূজা-উক্ত হইয়াছে। ইহা পশুভাব ও বীরভাব উভয়সম্মত। এইজন্য ইহার বিস্তৃত ব্যাখ্যা করা হইয়াছে। কালীপূজার কয়েকটি বিশেষ বিষয় মাত্র ইহাতে আছে,

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

gitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalga

সকল বিষয় নাই। ষষ্ঠ পটলে বীরভাবসম্মত বিষয়ই বাহুল্যরূপে কথিত হইয়াছে। এই সকল বিষয় বিশেষ গূঢ় রহস্যপূর্ণ, টিপ্পণী দ্বারা তাহা বুঝান অসম্ভব বোধে ব্যাখ্যা করা হয় নাই। পঞ্চম পটলে পঞ্চদশাক্ষর ও একবিংশত্যক্ষর মন্ত্র উক্ত হইয়াছে, তন্মধ্যে পঞ্চদশাক্ষর মন্ত্র গ্রন্থান্তরে উক্ত থাকিলেও কালীতন্ত্রে ইহা প্রক্ষিপ্ত বলিয়া বোধ হয়। দশম পটলে একাক্ষর, ত্র্যক্ষর ও ষড়ক্ষর মন্ত্র কথিত হইয়াছে। বঙ্গদেশে একাক্ষর মন্ত্রেরই প্রচলন বেশী। সকল মন্ত্রেরই উপাসনাপদ্ধতি দ্বাবিংশত্যক্ষর মন্ত্রের মত। অষ্টম পটলে সময়াচার উক্ত হইয়াছে, ইহাই কৌলাচার, ইহা সংক্ষিপ্ত, তন্ত্রান্তরে বিস্তৃত কৌলাচার দেখিতে পাওয়া যায়। সৌন্দর্য্যলহরীর টীকায় লক্ষ্মীধর সময়াচার ও কৌলাচারের ভেদ দেখাইয়া সময়াচার বেদানুমোদিত ও কৌলাচার বেদবাহ্য বলিয়াছেন। ভাস্কর রায় বামকেশ্বরতন্ত্রের টীকায় কৌলাচারকেও বেদানুমোদিত বলিয়াছেন।

কালীর উপাসনাপ্রতিপাদক বামমার্গ বা কৌলমার্গেরই বাহুল্য দেখিতে পাওয়া যায়। বর্ত্তমান সময়ে পশুভাবের সাধকই অধিক, তাঁহাদের জ্ঞানলিপ্সা চরিতার্থের উপযুক্ত কোন গ্রন্থ নাই। জগদম্বা সুযোগ ও অবসর প্রদান করিলে পাশবকল্পে দক্ষিণমার্গে কালীপূজার রহস্য ও পদ্ধতি লিখিবার ইচ্ছা আছে।

বঙ্গানুবাদে অক্ষরানুবাদ না দিয়া মর্ম্মানুবাদ দিয়াছি। রহস্যপূর্ণ স্থানগুলির অনুবাদ করি নাই। প্রক্ষিপ্ত ও নিতান্ত অশুদ্ধ বলিয়া দ্বাদশ পটলের অনুবাদ দেওয়া হয় নাই।

শ্রীযুক্ত জানকীনাথ সাহিত্যশাস্ত্রিমহাশয় হস্তলিখিত শ্যামারহস্য, তন্ত্রসার প্রভৃতি, এবং শ্রীযুক্ত পার্ব্বতীচরণ শাস্ত্রিমহাশয় তিনখানা কালীতন্ত্র প্রদান করিয়া ও শ্রীযুক্ত নগেন্দ্রনাথ সিদ্ধান্তরত্ন মহাশয় প্রুফ দেখিয়া আমার বিশেষ সাহায্য করিয়াছেন, এইজন্য তাঁহাদের নিকট কৃতজ্ঞতাপাশে আবদ্ধ রহিলাম। ইতি—

সংস্কৃতসাহিত্যপরিষদ্‌ভবন
১২ শ্যামবাজার ব্রিজ্ রোড্ কলিকাতা,
মহালয়া, ১৩২৯

শ্রীসতীশচন্দ্র সিদ্ধান্তভূষণ

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

शुद्धिपत्रम् ।

अशुद्धपाठः	शुद्धपाठः	पृष्ठे	पङ्क्तौ
प्रकृतेर्योषात्	प्रकृतेर्योगात्	४	६
शिवसूत्रक्तार्थ्यां	शिवसुत्रक्तार्थ्यां	१०	११
ऌ ॠ वै	ऌ ॡ वै	१३	१
फ व भ	फ व भ	”	६
ल व श	ल व श	”	७
ह च नमः	ह्लच नमः	”	१८
ट्वैस	ट्वैस	१४	११
मूलमन्त्रस्य	मूलमन्त्रस्य	”	१७
दिगन्दराम्	दिगम्बराम्	१६	२८
हसन्मखीम्	हसन्मुखीम्	१७	४
सेतुवन्धग्रा	सेतुवन्धा	२२	१८
वृत्तपञ्चकं	विकोणपञ्चकम्	२२	२५
तद्वहिश्चतुर्द्वार	तद्वहिरपरं वृत्तं	२२	२५
समन्वितं	तद्वहिश्चतुर्द्वारसमन्वितं	२२	२५
च्यग्रं चुं	दग्रं चं	२६	१८
प्रद्रश्य	प्रदर्श्य	”	२२
मध्यत्रिकीण	प्रथमविकोण	२७	१३
सन्मुखविकोणा	सन्मुखकोणा	”	१४
ग्राग्रा	ग्राग्रा	”	१५
मूखे	मूखे	”	२१
पूर्व्वाक्तेन	पूर्व्वोक्तेन	३६	७
सुषा	सुधा	३७	१
ललाट	ललाटे	”	१२
मुन्ड	मुण्ड	”	२४
मृतसूतक	मृतसूतके	३८	२६
अन्यं	अन्यां	३९	१७

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

gitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalga

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

কালীযন্ত্রম্।

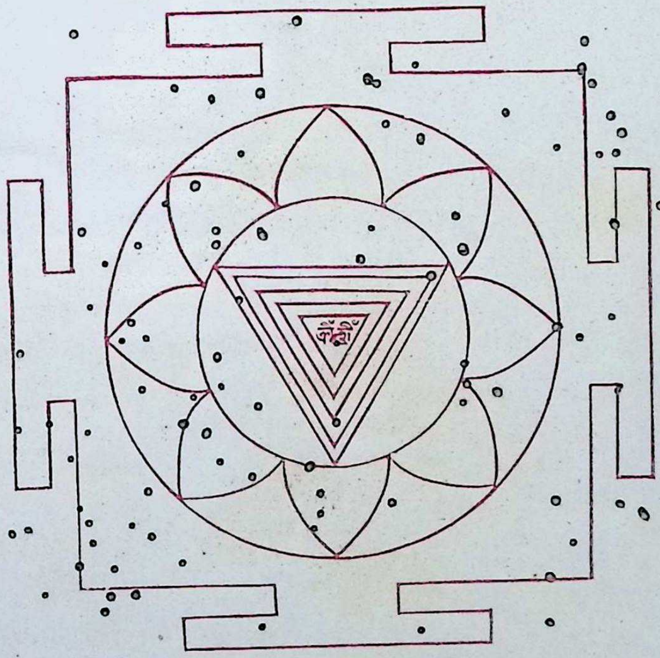

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

gitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalga

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

कालीतन्त्रम्

प्रथमः पटलः।

कैलासशिखरासीनं देवदेवं जगद्गुरुम् *।
उवाच पार्व्वती देवी † भैरवं परमेश्वरम् ॥ १ ॥

कालिकायाः पदाम्भोजं संस्मृत्य भवतापहम्।
तत्प्रीत्यै कालिकातन्त्रटिप्पणी क्रियते मया ॥
पूर्णानन्दगिरेर्व्वंश-कुटीरेण द्विजन्मना।
शिष्या सतीशचन्द्रेण विविच्य बहुयत्नतः ॥
भ्रमात् प्रमादादथवा ज्ञानदौर्ब्बल्यहेतुना।
तन्त्रार्थतत्त्वं यद्यस्यामन्यथा प्रतिपाद्यते ॥
तदा तद्दोषभीतेन प्रार्थ्यते सुतवत्सले।
मत्वा तं पुत्रदं दोषं मातस्त्वं क्षन्तुमर्हसि ॥

कैलासशृङ्गमेव महादेवस्य नित्यनिवासस्थानम्। तत्रस्थ एव भगवान् सर्व्वाणि तन्त्राणि समावातारयत्। अत आह कैलासशिखरासीनमित्यादि। वामकेश्वरतन्त्रस्य सेतुबन्धाख्य टीकायां [१।१२] श्रीमद्भास्कररायेणोक्तं—"स्वयमद्वितीयोऽपि परमशिवो द्विविधं विग्रहं प्रकाश-विमर्शभेदेन विरच्य विमर्शांशेन प्रष्टृत्वं प्रकाशांशेन वक्तृत्वञ्च स्वीकृत्य तन्त्रमवतारयितुमारभते—"श्रीदेव्युवाच" इति। तदुक्तं स्वच्छन्दतन्त्रे—

"गुरु-शिष्यपदे स्थित्वा स्वयमेव सदाशिवः।
प्रश्नोत्तरपरैर्व्वाक्यैस्तन्त्रं समवतारयत् ॥"

इति। अताऽगमस्यागमशास्त्रस्यानित्यत्वाशङ्कातः। कल्पसूत्रेऽपि—"भगवान् परमशिव-भट्टारकः श्रुत्याद्यष्टादशविद्याः सर्व्वाणि दर्शनानि लीलया तत्तदवस्थापन्नः प्रणीय संविन्मय्या भगवत्या भैरव्या स्वात्माभिन्नया पृष्टः पञ्चभिर्म्मुखैः पञ्चाम्नायान् प्रणिनाय" इति। तेन परमशिवः स्वयमेव विमर्शांशेन स्वात्मानं पृच्छतीत्यर्थः। "श्रीभैरव उवाच" इत्यस्यापि स्वयमेव प्रकाशांशेन

---

* । जगत्पतिम्। ग। † । पप्रच्छ परया भक्त्या। क।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

श्रीपार्व्वत्युवाच—*

देवदेव महादेव सृष्टि-स्थित्यन्तकारक † ।
किं तद्ब्रह्ममयं धाम श्रोतुमिच्छामि तत्त्वतः ॥ २ ॥
कालिकाया महाविद्यां समस्तभेदसंयुताम् ‡ ।
सपर्य्याभेदसहितां चतुर्व्वर्गफलप्रदाम् ॥ ३ ॥

श्रीभैरव उवाच—

महाविद्यां महामायां महायोगेश्वरीं § पराम् ।
सर्व्वविद्यामहाराज्ञीं ¶ सर्व्वसारस्वतप्रदाम् * ॥ ४ ॥
कामत्रयं वह्निसंस्थं † रति-विन्दुविभूषितम् ‡ ।
कूर्च्चयुग्मं तथा लज्जायुगलं तदनन्तरम् ॥ ५ ॥

स्वात्मानमुत्तरयतीत्यर्थः। प्रक्रान्ते लिटा कथितं भूतत्वन्तु वक्तान्यस्य सदाननत्वात्। अत एव तन्त्रराज-उत्तरपटलेषु वच्यमाणेऽप्यर्थः पूर्व्वपटलेषु "प्रोक्त" इति भूतार्थकपदेनैव तत्र तत्र निर्द्दिश्यते। अनद्यतनत्वन्त्वकालकलितत्वात्। परोक्षत्वं त्वगिन्द्रियगोचरत्वादुपपद्यत इति साम्प्रदायिकाः। एवं सर्व्वत्रापि योज्यम्।" इति। १

ब्रह्ममयं ब्रह्मस्वरूपं धाम तेज इत्यर्थः। कालिकायाः महतीं विद्यां विद्याशब्देन परिभाषितं मन्त्रं, ताञ्च समस्तभेदसंयुताम् एकाक्षर-त्र्यक्षरादिभेदसहितां, सपर्य्याभेदसहितां पूजायाः प्रकारभेदेन सहिताञ्च, श्रोतुमिच्छामीत्यन्वयः। अत्र देवीप्रश्नस्य द्विविधत्वे प्रतिभातेऽपि वस्तुत एक एव प्रश्नः। शक्ति-शक्तिमतोरभेदात् कालिकाया एव ब्रह्मकोटावस्थानमिति शाक्तसिद्धान्तात्। अत एव भैरवेणापि देवीप्रश्नानन्तरं कालिकाया मन्त्रपूजादिकमेवोक्तं, न तु पृथग् ब्रह्मस्वरूपम्। देव्याः प्रश्नेऽपि "चतुर्व्वर्गफलप्रदाम्" इत्यनेन कालिकाया एव ब्रह्मस्वरूपत्वं सूचितम्। चतुर्व्वर्गान्तर्गतमोक्षफलप्रदाने ब्रह्मेतरस्याक्षमत्वात्। "चतुर्व्वर्गफलप्रदाम्" इत्यस्य महाविद्याया विशेषणत्वेऽपि मन्त्र-देवतयोरैक्यात् कालिकैव चतुर्व्वर्गफलप्रदा। महाविद्यापदेन द्वाविंशत्यक्षर-

---

* भैरव्युवाच। क। † सृष्टि-स्थिति-लयात्मक। ख, घ। सृष्टिप्रलयकारक। ग। ‡ कालिकाया महादेव्याः पूजाञ्चैव विशेषतः। क। § महायोगेश्वरीम्। ग, घ। ¶ सर्व्वविद्यां। ख। * सर्व्वैश्वर्य्यफलप्रदाम्। क। † वर्गाद्यं वह्निसंयुक्तम्। ख। ‡ समन्वितम्। ख, ग, घ

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

दक्षिणे कालिके चेति पूर्व्वं बीजानि चोद्धरेत् ।
अन्ते वह्निवधूं दद्याद् विद्याराज्ञी प्रकीर्त्तिता ॥ ६ ॥

मन्त्र एव सूचितः, तस्य मुख्यत्वात् । अत एव भैरवेणापि प्रथमं द्वाविंशत्यक्षरमन्त्रं पूजादिकञ्चोक्त्वा पश्चादन्ये मन्त्रभेदाः कथिताः । २—३ ।

कामः ककारः । "कः क्रोधीशो महाकाली कामदेवः प्रकाशकः" इति [सेतुबन्धे सप्तम-विश्रामे ४३श श्लोकव्याख्यायां भास्कररायधृत] कोषात् । तस्य त्रयं ककारत्रयमित्यर्थः । वह्नी रेफः । रेफस्य वह्निबीजत्वात्, "रः स्यात् कामेऽनिले वह्नौ" इत्येकाक्षरकोषाच्च । तत्संस्थं रेफारूढं ककारत्रयमित्यर्थः । रतिः ईकारः । "ईर्गोविन्दस्त्रिमूर्त्तिः स्याद् वामाक्षी कमला कला । माया लक्ष्मी रतिः शान्तिर्वैष्णवी विन्दुमालिनी ।" इति मन्त्राभिधानात् । विन्दु-रनुस्वारः । "अक्रूरो व्योमरूपश्च प्रद्युम्नश्चन्द्रसंज्ञकः । अनुस्वारस्तथा विन्दु रङ्कारश्च शिरोमतः ।" इति मातृकानिघण्टुवचनात् । रतिविन्दुभ्यां ईकारानुस्वाराभ्यां विभूषितं रेफारूढं ककारत्रयं, तेन क्रीं क्रीं क्रीं इत्यायाति । तदनन्तरं कूर्चयुग्मं, कूर्चं हूं बीजम् । "हूं कूर्चं परमेष्ठि दीर्घकवचम्" इति मन्त्राभिधानात् । तस्य युग्मम् । तेन हूं हूं इत्येवं भवति । तदनन्तरं लज्जायुगलम् । "ह्रीं लज्जा गिरिजा च शक्तिरपि हृल्लेखा च माया परा" इति मन्त्राभिधानात् लज्जापदेन ह्रीं बीजमुच्यते, तस्यद्युगलं, तेन ह्रीं ह्रीं इति भवति । एवं क्रमेण क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं इति बीजसप्तकमुद्धृतम् । तदनन्तरं "दक्षिणे कालिके" इति स्वरूपम् । ततः परं पूर्व्वबीजानि पूर्व्वोक्तसप्तबीजानि उद्धरेत् । अन्ते सर्व्वशेषे वह्निवधूं स्वाहां दद्यात् । "स्वाहा वह्निवधूः शिरोऽपि ठयुगम्" इति मन्त्राभिधानवचनाद् वह्निवधूशब्देन स्वाहोच्यते । एतेन "क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं दक्षिणे कालिके क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा" इति द्वाविंशत्यक्षरो दक्षिणकालिकामन्त्र उद्धृतः ।

स्वाहान्ताः स्त्रीदेवतामन्त्रा "विद्या" शब्देन परिभाष्यन्ते । तथाच शारदातिलके द्वितीय-पटले—

"मन्त्राः पुंदेवता ज्ञेया विद्याः स्त्रीदेवताः स्मृताः ।
पुं-स्त्री-नपुंसकात्मानो मन्त्राः सर्व्वे समीरिताः ॥
पुंमन्त्रा हुंफडन्ताः स्युर्द्विठान्ताश्च स्त्रियो मताः ।
नपुंसका नमोऽन्ताः स्युरित्युक्ता मनवस्त्रिधा ॥" इति ।

"द्विठान्ता इति स्वाहान्ताः । ठशब्देन साम्यादर्थाद्वा विन्दुरुच्यते । ठः शून्ये च हृद्दनौ" इति कोशात् । शून्यं विन्दुरूपमेव, तस्य द्वित्वं तेन विसर्गः, स च शक्तिरूप इति । तेन द्विठशब्देनाग्निशक्तिः स्वाहोक्ता ।" इति राघवभट्टः ।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

gitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalga

अयमपि मन्त्रः स्वाहान्तत्वात् स्त्रीदेवतात्मकत्वाच्च विद्यापदवाच्यः। सर्व्वासां विद्यानामियं प्राधान्येन राज्ञीव प्रकाशते, अतो विद्याराज्ञीत्युच्यते। अथवा विद्या ब्रह्मविद्या, ब्रह्मज्ञानोपायत्वेन ब्रह्मविद्या बहुधा; तासु आशु ब्रह्मज्ञानप्रबोधकत्वादियं विद्या राज्ञी श्रेष्ठेत्यर्थः। तथाच श्रीतत्त्वचिन्तामणौ, कुलार्णवतन्त्रे च—

"उपाया बहवः सन्ति ज्ञातुं ब्रह्म सनातनम्।
तथापि प्रकृतेर्योगात् क्षिप्रं प्रत्यक्षतां व्रजेत्॥" इति।

यद्यपि कामशब्देन रेफादयः, वह्निशब्देन ईकारादयः, रतिशब्देन ऊकारादयश्च अभिधीयन्ते, तथाप्यत्र तन्त्रान्तरसंवादात् ककारादय एव गृहीताः। तथाच कालिकोपनिषदि—"अथ हैनां ब्रह्मरन्ध्रे ब्रह्मस्वरूपिणीमाप्नोति सुभगां त्रिगुणामुक्त्वा "काम-रेफेन्दिराबिन्दुमेलनरूपा, एतत्त्रिगुणानादौ; तदनु कूर्च्चबीजद्वयं, कूर्च्चबीजन्तु—व्योम-षष्ठस्वर-बिन्दुमेलनरूपं, तदेव द्विरुच्चार्य्य; भुवनाद्वयं, भुवना तु—व्योम-ज्वलनेन्दिराशून्यमेलनरूपा, तद्द्वयं, दक्षिणे कालिके इति सम्बोधनं; तदनु सप्तबीजमुच्चार्य्य वह्निजायामुच्चरेत्।" कामः ककारः, रेफः, इन्दिरा ईकारः, बिन्दुरनुस्वारः, एतेषां मेलनरूपा सुभगा क्रीं बीजमित्यर्थः। सा च सुभगा त्रिगुणा क्रीं क्रीं क्रीं इति। व्योम हकारः, षष्ठस्वर ऊकारः, बिन्दुरनुस्वारः, एतेषां मेलनरूपं कूर्च्चबीजं "हूं" इति। तस्य द्वयम्। व्योम हकारः, ज्वलनं रेफः, इन्दिरा ईकारः, शून्यं बिन्दुरनुस्वार इत्यर्थः। एतेषां मेलनरूपा भुवना ह्रीं बीजम्। तस्य द्वयम्। "दक्षिणे कालिके" इति सम्बोधनान्तं स्वरूपं वह्निजाया स्वाहा। तथाच कामधेनुचन्द्रिकाधृतवीरतन्त्रेऽपि—

"ककारं वह्निसंयुक्तं रतिबिन्दुसमन्वितम्।
त्रिगुणञ्च ततः कूर्च्चयुग्मं लज्जायुग्मं ततः॥
दक्षिणे कालिके चेति पूर्व्वबीजानि चोद्धरेत्।
वह्निजायावधिः प्रोक्तः कालिकाया मनुर्म्मतः॥" इति।

मन्त्रार्थमाह तन्त्रसारधृतयामले—

"ककाराञ्ज्वलरूपत्वात् केवलं मोक्षदायिनी।
ज्वलनार्णसमायोगात् सर्व्वतेजोमयी शुभा॥
मायावर्णेन देवेशि सृष्टिस्थित्यन्तकारिणी।
बिन्दूनां निष्कलत्वाच्च कैवल्यफलदायिनी॥
बीजत्रया शाम्भवी सा केवलं ज्ञानचित्कला।
शब्दबीजद्वयेनैव शब्दराशिप्रबोधिनी॥
लज्जाबीजद्वयेनैव सृष्टिस्थित्यन्तकारिणी।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

सम्बोधनपदेनैव सदा सन्निधिकारिणी ॥
स्वाहया जगतां माता सर्व्वपापप्रणाशिनी।" इति।

माया ईकारः। शब्दवीजं हूं वीजम्। मन्त्राक्षरैरङ्गविभागमाह रामानन्दतीर्थस्वामि-विरचिततन्त्रसारपरिशिष्टधृतोत्तरातन्त्रे—

"क्रीं कारो मस्तकं देवि क्रीं कारश्च ललाटकम्।
नेत्रद्वयञ्च क्रीं कारो हूं कारेण च नासिका ॥
हूं कारो मुखपद्मं स्यात् क्रीं कारः कर्णयुग्मकम्।
क्रीं कारेण भवेद्ग्रीवा दकारश्चिवुकं भवेत् ॥
चिकारेण भवेद्दन्तो णेकारेनोष्ठयुग्मकम्।
काकारेण स्तनद्वन्द्वं लिकारः पृष्ठदेशकः ॥
केकारेण भवेद्बाहुः क्रीं कारेणोदरं भवेत्।
क्रीं कारो नाभिदेशः स्यात् क्रीं कारश्च नितम्बकः ॥
हूं कारो योनिरूपः स्यात् हूं कारेणोरुयुग्मकम्।
क्रीं कारो जानुयुग्मं स्यात् क्रीं कारो गुल्फदेशकः ॥
स्वाशब्देन पदद्वन्द्वं हाशब्देनखरं तथा।"

अन्येषामङ्गानामेष्वन्तर्भावः।

"मन्त्रार्थं देवतारूपचिन्तनं परमेश्वरि।
मन्त्रात्मकस्य देहस्य मन्त्रवर्णैर्न देवता ॥
वाच्य-वाचकभावेन अभेदो मन्त्र-देवयोः।
मन्त्रवाच्या देवता च मन्त्रो हि वाचकः स्मृतः ॥
वाचकेऽपि च विज्ञाते वाच्य एव प्रसीदति।"

इति शाक्तानन्दतरङ्गिनीधृतयामलवचनान्मन्त्र-देवतयोरैक्यभावनायाम् उत्तरातन्त्रोक्तवचन-क्रमेण मन्त्रस्य तत्तदक्षरैर्देवतायास्तत्तदिन्द्रियाणां परिकल्पनं कर्त्तव्यम्। वस्तुतस्तु देवताया मन्त्रात्मकमेकं रूपं विद्यते। तथाच वामकेश्वरतन्त्रस्य सेतुबन्धाख्यटीकायां भास्कररायेणोक्तम्— "उपास्यायाः परमेश्वर्यास्त्रीणि रूपाण्युपास्तियोग्यानि, स्थूलं सूक्ष्मं परञ्चेति। तत्राद्यं करचरणाद्य-वयवशीलं मन्त्रसिद्धिमतां चक्षुरिन्द्रिय-पानीन्द्रिययोर्ग्राह्यम्। * * * द्वितीयं मन्त्रात्मकं पुण्यवतां श्रवणेन्द्रिय-वागिन्द्रिययोर्योग्यम्। * * * तृतीयं वासनात्मकं पुण्यवतां मनसो योग्यम्। * * * एतन्नितयातीतन्तु वाङ्मनसातीतं मुक्तैरहन्तयाऽनुभूयमानमखण्डं रूपम्।" इति। विषयस्यास्य बहुवक्तव्यत्वेऽपि ग्रन्थगौरवभिया स्वल्पेनैवोपसंहारः कृतः। ४—६।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

gitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalga

नात्र सिद्धाद्यपेक्षाऽस्ति न वा मित्रारिलक्षणम् * ।
न वा प्रयासबाहुल्यं † न कायक्लेशसम्भवः ॥ ७ ॥

नात्र सिद्धेत्यादि। अस्मिन् मन्त्रे सिद्धादीनाम् अकथहचक्रोक्त-सिद्ध-साध्य-सुसिद्धारीणाम् अपेक्षा नास्ति। "न वा मित्रारिलक्षण"मित्यनेन कुलाकुलचक्रविचारोऽपि नास्तीत्युक्तम्। चक्रद्वयकथनेन कस्यापि चक्रस्य विचारो नापेक्षित इति सूचितम्। प्रयासबाहुल्यमिति—"कलौ संख्या चतुर्गुणा" इति युगसेवापरिश्रमोऽपि नापेक्षितः। न कायक्लेशसम्भव इति—योगशास्त्रोक्त-विधानेनासनप्राणायामादिना शरीरक्लेशोऽपि नापेक्षितः। यस्या विद्यायाः स्मरणमात्रेण केवलं जप-मननमात्रेण नरो जीवन्मुक्तो भवति तस्या ब्रह्मस्वरूपत्वात्। अत एव तस्याः सिद्धाद्यपेक्षादिकं नास्तीति भावः। तथाहि काल्यर्चनचन्द्रिकाधृतकालीमाख्यातन्त्रे—

"कालीतारानन्त्रदाने चक्रचिन्तां करोति यः।
का गतिर्विद्यते तस्य निस्तारो विद्यते न वा॥"

इति प्रश्नानन्तरम्—"ईश्वर उवाच—

"अज्ञानाद्यदि वा मोहात् काली-तारामनौ प्रिये।
कृते चक्रादिगणने शुनीविष्ठाकृमिर्भवेत्॥
कल्पान्तेऽपि महादेवि निस्तारो विद्यते न हि।" इति।

पुरश्चर्यार्णवधृतदेवीपुराणे—

"कालिकायाञ्च तारायां कुल्लुकायां त्रिकूटके।
तथैकाक्षरकूटे च शिवपञ्चाक्षरेऽपि च॥
षडक्षरे तु तस्यैव विष्णोरष्टाक्षरेऽपि च।
विष्णोर्द्वादशवर्णे च रामचन्द्रेऽथ तारके॥
वैष्णवेषु च भैरव्यां सुन्दरीमन्त्रवर्यके।
सारस्वते च बालायां सिद्धादीन् नैव शोधयेत्॥" इति।

एतेषु मन्त्रेषु अकथहचक्रोक्तान् सिद्धादीन् सिद्ध-साध्य-सुसिद्धारीन् नैव शोधयेदित्यर्थः। केचिदविद्याप्रशस्तिपरोऽयमर्थवाद इति मत्वा चक्रविचारादीनामावश्यकत्वं वदन्ति। अपरे तु—

"कालिकायाञ्च तारायां ताराचक्रं शुभं भवेत्।"

इति तन्त्रसारधृतवचनात् केवलं नक्षत्रचक्रविचारस्यावश्यकतामाहुः। अरिमन्त्रस्य विशेष-दोषश्रवणात् केचित्साम्प्रदायिका अकथहचक्रविचारं कुर्वन्ति। ७।

---

* नात्र चिन्ता विशुद्धिस्तु नारिमित्रादिलक्षणम्। क। नात्र चिन्ता विशुद्धिर्वा नारिमित्रादिचिन्तनम्। ख। † न वित्तव्ययबाहुल्यं। ग।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

यस्याः स्मरणमात्रेण जीवन्मुक्तो भवेन्नरः * ।
भैरवोऽस्य ऋषिः प्रोक्त उष्णिक् छन्द उदाहृतम् † ॥८॥
देवता कालिका प्रोक्ता ‡ लज्जावीजन्तु वीजकम् ।
शक्तिस्तु § कूर्च्चं वीजं स्यादनिरुद्धसरस्वती ॥ ९ ॥

ऋष्यादिकमाह भैरव इति। एतन्मन्त्रस्य ऋषिर्भैरवः। तत्तच्छक्तेस्तत्तन्नामधेयः शिव एव भैरवपदवाच्यः। कालिकाया महाकाल एव भैरव ऋषिश्च।

"कालिकाया महाकालः सुन्दर्य्या ललितेश्वरः।"

इत्यादि पुरश्चर्य्यार्णवधृतशक्तिसङ्गमतन्त्रवचनात्। यश्च प्रथममादिपुरुषान्मन्त्रं लब्ध्वा तन्मन्त्रसाधनेन सिद्धो बभूव, स एव तन्मन्त्रस्य ऋषिः। तथाच तन्त्रसारधृतगौतमीये—

"महेश्वरमुखात् ज्ञात्वा यः साक्षात्तपसा मनुम्।
संसाधयति शुद्धात्मा स तस्य ऋषिरीरितः॥"

इति। एतत्तु साधारणविषयम्। कालिकायान्तु महेश्वररूपी काल्यभिन्नो महाकाल एव लोकशिक्षार्थं प्रथमं मन्त्रं साधयामास। अतः स एव ऋषित्वं प्राप्तः। महाकालस्य कालीमन्त्रसाधने कर्पूरस्तवादिकं प्रमाणम्। एतन्मन्त्रस्य छन्द उष्णिक्; देवता दक्षिणकालिका; वीजं लज्जावीजं ह्रींकारः; शक्तिः कूर्च्चवीजं हूंकारः; कवित्वार्थे विनियोगः। अत्र कीलकं नोक्तम्। तत्तु श्यामारहस्यधृतकालीक्रमे—

"कीलकञ्चाद्यवीजन्तु चतुर्वर्गार्थसिद्धये।"

इति। आद्यवीजं क्रीं कीलकम्।

"कवित्वार्थं इत्युपलक्षणं, यद्यत् स्वाभिलषितं तदर्थं विनियोगः तन्त्रे विविधफलश्रवणात्। ततो यथेष्टमभिलापः कार्य्यः।" इति श्यामारहस्यकारः। अत एव—

"भैरवोऽस्य ऋषिः प्रोक्त उष्णिक् छन्द उदाहृतम्।
दक्षिणा कालिका देवी चतुर्व्वर्गफलप्रदा॥"

इति श्यामारहस्यधृतकुलचूड़ामणिवचने पूर्व्वोक्तकालीक्रमवचने च चतुर्व्वर्गफललाभस्मरणात् अभिलापवाक्ये—"चतुर्व्वर्गसिद्धये विनियोगः" इति साम्प्रदायिकैर्व्यवह्रियते। तन्त्र-

---

* अस्याः स्मरणमात्रेण सिद्धयोऽष्टौ भवन्ति हि। ख, ग, घ। † छन्दो वरानने। ग। ‡ देवी। क। § तन्त्रसारे श्यामारहस्ये च उद्धृतकालीतन्त्रवचनावल्यां "वीजकम्" इत्यतः परं "शक्तिस्तु" इत्यतः पूर्व्वं "कीलकञ्चाद्यवीजं स्याच्चतुर्व्वर्गफलप्रदम्" इत्यधिकः पाठो दृश्यते।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

gitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalga

कवित्वार्थे नियोगः * स्यादेवं ऋष्यादिकल्पना ।
अङ्गन्यास-करन्यासौ यथावदभिधीयते ॥ १० ॥

सारे तु—"पुरुषार्थसिद्धये विनियोगः" इति वाक्यं दृश्यते । नायं वाक्यभेदः, यतो धर्म्मार्थकाम-मोक्षरूपचतुर्व्वर्ग एव पुरुषार्थत्वेन प्रसिद्धः । ऋष्यादीनामज्ञाने दोषमाह श्यामारहस्यधृत-गौतमीये—

"ऋषि-च्छन्दोऽपरिज्ञानान्न मन्त्रः फलदो भवेत् ।
दौर्व्वल्यं याति मन्त्राणां विनियोगमजानताम् ॥" इति ।

ऋष्यादिन्यासस्यावश्यकतामाह शाक्तानन्दतरङ्गिण्याम्—

"ऋषि-च्छन्दोदेवतानां विन्यासेन विना यदि ।
करोति साधको यत्र तत् सर्व्वं निष्फलं भवेत् ॥" इति ।

न्यासस्थानमाह गौतमीये—

"गुरुत्वान्मस्तके चास्य न्यासस्तु परिकीर्त्तितः ।
सर्व्वेषां मन्त्रतत्त्वानां छादनाच्छन्द उच्यते ॥
अक्षरत्वात् पदत्वाच्च मुखे छन्दः प्रकीर्त्तितः ।
सर्व्वेषामेव जन्तूनां भाषणात् प्रेरणात्तथा ॥
हृदयाम्भोजमध्यस्थां देवतां तत्र तां न्यसेत् ।

अस्य ऋषेर्मन्त्रद्रष्टृत्वेन गुरुत्वान्मस्तके न्यासः । शाक्तानन्दतरङ्गिण्याम्—

"ऋषिं न्यसेन्मूर्ध्नि देशे छन्दस्तु मुखपङ्कजे ।
देवतां हृदये चैव वीजन्तु गुह्यदेशके ॥
शक्तिन्तु पादयोश्चैव सर्व्वाङ्गे कीलकं न्यसेत् ।" इति ।

ऋष्यादिन्यासे अङ्गुलिनियममाह कालीचन्द्रिकाधृतकालीसर्व्वस्वसम्पुटकी—

"अङ्गुष्ठच शीर्षदेशे मध्यमानामिके मुखे ।
अङ्गुष्ठरहितं देवि हृदि देवं विनिर्द्दिशेत् ॥
तत्त्वाख्यमुद्रया देवि गुह्ये वीजं विनिर्द्दिशेत् ।
शक्तिञ्च विन्यसेद्भद्रे मध्याङ्गुल्या पदद्वये ॥
कीलकं विन्यसेद् देवि सर्व्वाङ्गे तलयोस्तथा ।" इति ।

ऋष्यादिन्यासप्रयोगस्तु—कृताञ्जलिः पठेत्—अस्य मन्त्रस्य भैरव ऋषिरुष्णिक्छन्दः श्रीदक्षिणकालिका देवता क्रीं वीजं, हूं शक्तिः, क्रीं कीलकं चतुर्व्वर्गसिद्धये विनियोगः ।

* कवित्वे विनियोगः । ग ।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

षड्दीर्घभाजा बीजेन प्रणवाद्येन कल्पयेत्।
हृदयाय नमः प्रोक्तं शिरसे वह्निवल्लभा ॥ ११ ॥

इत्यभिलप्य अङ्गुष्ठेन शिरसि—ओं भैरवाय ऋषये नमः। मध्यमानामिकाभ्यां मुखे—ओं उष्णिक्छन्दसे नमः। अङ्गुष्ठरहिताङ्गुलिभिः हृदये—श्रीमद्दक्षिणकालिकायै देवतायै नमः। संलग्नाङ्गुष्ठानामिकारूपतत्त्वमुद्रया गुह्ये—ओं ह्रीं बीजाय नमः। मध्यमाङ्गुल्या पद्द्वये—ओं हूं शक्तये नमः। हस्तद्वयतलयोः सर्व्वाङ्गे—ओं क्रीं कीलकाय नमः।

अनिरुद्धसरस्वतीति, विद्याया विशेषणम्। अनिरुद्धा अनर्गला सरस्वती वाग् यया सा अनिरुद्धसरस्वती विद्या। एतद्विद्योपासकस्य मुखादनर्गला गद्यपद्यमयी वाङ् निर्गच्छति। तथाच कर्पूरस्तवे—

"तेषां गद्यानि पद्यानि च मुखकुहरादुल्लसन्त्येव वाचः।" इति। ८—१०।

अङ्गन्यास-करन्यासावाह षड्दीर्घभाजेति। षड् दीर्घान् आ-ई-ऊ-ऐ-औ-अः इति दीर्घस्वरान् भजते इति षड्दीर्घभाक्। आदौ भवः आद्यः, प्रणवः आद्यो यस्य, तेन प्रणवाद्येन षड्दीर्घभाजा बीजेन अङ्गन्यास-करन्यासौ कल्पयेदित्यर्थः। अत्र बीजशब्दस्यार्थे मतभेदो दृश्यते। श्रीमत्पूर्णानन्दपरमहंसमते बीजमाद्यबीजं क्रींकारः। तन्त्रसारकारमते ह्रींकारः। श्रीमत्पूर्णानन्दपरमहंसस्तु श्यामारहस्ये कालीतन्त्रवचनमुद्धृत्य "बीजं मन्त्राद्यबीजं, न तु पारिभाषिकं, तन्त्रान्तरस्वरसात्। स्वतन्त्रेऽपि—

"प्रणवञ्चाद्यबीजञ्च षड्दीर्घस्वरभाजितम्।
कुर्य्यात् षडङ्गविन्यासं मूलखण्डत्रयेण वा॥",

इति व्याख्यातवान्। आद्यबीजं, मन्त्राद्यबीजं क्रींकारः। पारिभाषिकबीजं ह्रींकारः, "लज्जाबीजन्तु बीजकम्" इति वचनात्। तन्त्रसारकारस्तु "तेन मायया षडङ्गन्यासः। 'षड्दीर्घभाजा बीजेन प्रणवाद्येन कल्पयेत्।' वीरतन्त्रे—"दीर्घषट्कयुताद्येन प्रणवाद्येन कल्पयेत्' इति वा।" इत्युक्तवान्। एतन्मते क्रींकारह्रींकारयोरिच्छाविकल्पः, श्यामारहस्यकारेण तु ह्रींकारो नाङ्गीकृतः। सम्प्रदायभेदेन क्रींबीजेन ह्रींबीजेन च कराङ्गन्यासौ प्रचलितौ। स्वतन्त्रवचने "मूलखण्डत्रयेण वा" इत्यनेन पक्षान्तरमुक्तम्। तदुक्तं श्यामारहस्ये—"मूलखण्डत्रयद्विरावृत्त्या वा कुर्य्यात्। आद्यसप्तबीजेन हृदयं, द्वितीयखण्डषड़क्षरेण शीर्षं, तृतीयखण्डेन शेषाक्षरेण शिखां, पुनराद्यखण्डेन कवचं, द्वितीयखण्डेन नेत्रत्रयं, तृतीयखण्डेनास्त्रम्। इत्थं वा षडङ्गन्यासं कुर्य्यात्।" प्रकारोऽयं कैश्चिद्व्यवह्रियते न वा, न जाने।

"षडङ्गानि न्यसेन्मन्त्री विःसङ्गदा यथाक्रमम्।"

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

gitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalga

शिखायै वषड़ित्युक्तं कवचाय हुमीरितम् ।
नेत्रत्रयाय वौषट् स्यादस्त्राय फड़िति क्रमः * ॥ १२ ॥

इति श्यामारहस्यधृतभैरवतन्त्रवचनात् विः सकृद्वा अङ्गन्यासं कुर्य्यात् । वारत्रये फल-बाहुल्यम् । अङ्गन्यासे अङ्गुलिनियमस्तु तन्त्रसारधृतयामले—

"हृदयं मध्यमाऽनामा-तर्जनीभिः स्मृतं शिरः ।
मध्यमा-तर्जनीभ्यां स्यादङ्गुष्ठेन शिखा स्मृता ॥
दशभिः कवचं प्रोक्तं तिसृभिर्नेत्रमीरितम् ।
प्रोक्ताङ्गुलिभ्यामस्त्रं स्यादङ्गक्लृप्तिरियं मता ॥" इति ।

तिसृभिस्तर्जनी-मध्यमानामाभिः ।

"तर्जनी-मध्यमा-ऽनामा प्रोक्ता नेत्रत्रये क्रमात् ।"

इति राघवभट्टधृतवचनात् । प्रोक्ताङ्गुलिभ्यां शिरसूक्ताभ्यां मध्यमा-तर्जनीभ्याम् ।

"तर्जनी-मध्यमाभ्यान्तु ततोऽस्त्रं विन्यसेत् प्रिये ।"

इति भास्कररायधृतदक्षिणामूर्त्तिसंहितावचनात् । प्रयोगस्तु—ओं क्रां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः । ओं क्रीं तर्जनीभ्यां स्वाहा । ओं क्रूं मध्यमाभ्यां वषट् । ओं क्रैं अनामिकाभ्यां हुं । ओं क्रौं कनिष्ठाभ्यां वौषट् । ओं क्रः करतलपृष्ठाभ्यां फट् । इति करन्यासः । ओं क्रां हृदयाय नमः इति दक्षहस्ततर्जनी-मध्यमा-ऽनामाभिर्हृदये न्यसेत् । ओं क्रीं शिरसे स्वाहा इति तर्जनी-मध्यमाभ्यां शिरसि न्यसेत् । ओं क्रूं शिखायै वषट् इति मुष्टिबद्धदक्षहस्ताङ्गुष्ठेन शिखायां न्यसेत् । ओं क्रैं कवचाय हुं इति हस्तद्वयसर्व्वाङ्गुलिभिः सर्व्वाङ्गे न्यसेत् । ओं क्रौं नेत्रत्रयाय वौषट् इति तर्जनी-मध्यमा-ऽनामाभिः नेत्रत्रये न्यसेत् । ओं क्रः अस्त्राय फट् इति दक्षहस्त-तर्जनी-मध्यमाभ्यां वामहस्ततले तालत्रयं दद्यात् । इति षड़ङ्गन्यासः । नेत्रन्यासे तु स्वकपाले नासिकामूलदेशे तृतीयनेत्रं कल्पयित्वा तर्जन्या दक्षनेत्रे मध्यमया ऊर्द्ध्वनेत्रे अनामया वामनेत्रे न्यसेत् । करन्यासे वामहस्ततले दक्षहस्तपृष्ठेन पृष्ठन्यासः, अङ्गन्यासे तु दक्षहस्ततर्जनी-मध्यमाभ्यां वामहस्ततले तालत्रयदानम्, इति विशेषः ।

करन्यासनियमप्रमाणन्तु प्रपञ्चसारे षष्ठपटले—

"अङ्गुलीषु क्रमादङ्गैरङ्गुष्ठादिषु विन्यसेत् ।
कनिष्ठान्तासु तद्वाह्यतलयोः करयोः सुधीः ॥
अस्त्रेण तालवितयम्" इति ।

* । नेत्रत्रयाय वौषट् च अस्त्राय फट् प्रकीर्त्तितम् । ख, ग, घ ।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

इति क्रोंवीजेन न्यासप्रयोगः। क्रीं'वीजद्वारा न्यासे तु—क्रां क्रीं क्रूं क्रैं क्रौं क्रः इत्येतेषु ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रैं ह्रौं ह्रः इति पठनीयं, अन्यत् सर्व्वमेकरूपम्।

अत्र "अङ्गन्यास-करन्यासौ" इति पाठादङ्गन्यासस्यादौ कर्त्तव्यत्वमायाति।

"अङ्गन्यास-करन्यासौ मायया दीर्घयाचरेत्।"

इति शाक्तानन्दतरङ्गिनीधृतवचनेनापि शाक्तसाधारणपूजाप्रसङ्गे तथाभिहितम्। सत्साम्प्रदायिकैस्तु करन्यास एवादौ क्रियते।

"करन्यासं पुरा कृत्वा देहन्यासमतःपरम्।
अङ्गन्यासं न्यसेत् पश्चादेष साधारणो विधिः॥"

इति राघवभट्टधृतवचनेनापि करन्यासस्याग्रकर्त्तव्यत्वमायातम्। पाठक्रमाच्छाब्दक्रमस्य बलवत्त्वादत्रापि करन्यास एवादौ करणीयः। अङ्गन्यासमन्त्राणां तात्पर्य्यमाह प्रपञ्चसारे षष्ठ-पटले—

"हृदयं बुद्धिगम्यत्वात् प्रणामः स्यान्नमः पदम्।
क्रियते हृदयेनातो बुद्धिगम्या नमस्क्रिया॥
तुङ्गार्थत्वाच्छिरः स्वे स्वे विषयाहरणे हिठः।
शिरोमन्त्रेण चोत्तुङ्गविषयाहृतिरीरिता॥
शिखा तेजः समुद्दिष्टा वषड़ित्यङ्गमुच्यते।
तत्तेजोऽस्य तनुः प्रोक्ता शिखामन्त्रेण मन्त्रिणः॥
कव ग्रहण इत्यस्माद्धतोः कवचसम्भवः।
हुं तेजस्तेजसा देहो गृह्यते कवचं ततः॥
नेत्रं दृष्टिः समुद्दिष्टा वौषड़् दर्शनमुच्यते।
दर्शनं हृशि येन स्यात्तत्तेजो नेत्रवाचकम्॥
अस-वसादिकौ (?) धातू स्तः क्षेप-चलनार्थकौ।
ताभ्यामनिष्टमाक्षिप्य चालयेत् फट्पदाग्निना॥

राघवभट्टधृतगौतमीये—

"हन्यमानो हृदात्मायं हृदये स्याच्चिदात्मिकः।
क्रियते तत्परत्वन्तु हृन्मन्त्रेण ततः परम्॥
सर्व्वज्ञादिगुणोत्तुङ्गे संविद्रूपे परात्मनि।
क्रियते विषयाहारः शिरोमन्त्रेण धीमता॥
हृच्छिरोरूपविज्ञानमयता भावना दृढ़ा।
क्रियते निजदेवस्य [देहस्य ?] शिखामन्त्रेण सादरम्॥

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

एवं यथाविधिं * छत्वा वर्णन्यासं समाचरेत्।
वर्णन्यासं प्रवक्ष्यामि येन देवीमयो भवेत्॥ १३॥

मन्त्रात्मकस्य देहस्य मन्त्रवाच्येन तेजसा।
सर्व्वतो वर्म्ममन्त्रेण क्रियतेऽनन्यहंवृतिः॥
यद्ददाति परं ज्ञानं संविद्रूपे परात्मनि।
हृदयादिमयं तेजः स्यादेतन्नेवसंज्ञकम्॥
आध्यात्मिकादिरूपं यत् साधकस्य विनाशयेत्।
अविद्याजातमस्त्रं तत् परं धाम समीरितम्॥" इति। १०--१२।

वर्णन्यासमाह—वर्णन्यासमित्यादिना। वर्णन्यासस्तु द्विविधः, सविन्दुवर्णन्यासो निर्व्विन्दुवर्णन्यासश्च। तत्र निर्व्विन्दुवर्णन्यास एव कालीतन्त्रसम्मतः। तथाच श्यामारहस्यकारेण कालीतन्त्रवचनान्युद्धृत्य "अथैतल्लिखितवचनस्वरसात् विन्दुरहित एव वर्णन्यासः। विरूपाक्षमते तु सविन्दुरेव, इत्यस्य प्रमाणमुक्तं कवचे लिपिन्यासे।" इत्युक्तम्। तन्त्रसारकारेण तु सविन्दुलिपिन्यासं लिखित्वा "कालीतन्त्रे पुनर्निर्व्विन्दुः। यथा—'अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ ऌ ॡ वै हृदयं स्पृशेत्" इत्यादि। किन्तु—"सविन्दून् वा न्यसेदेतान् निर्व्विन्दून् वाथ वर्णवान्।" इत्याचार्य्यपरिगृहीतभैरवीयवाक्यादुभयमेव युक्तम्।" इति लिखितम्। राघवेन्द्रभट्टाचार्य्यस्तु नित्यनैमित्तिककाम्यार्चनपद्धतौ सविन्दुलिपिन्यासं उक्त्वा "इदमत्रावधेयं, अयं सविन्दुवर्णन्यासस्तु विरूपाक्षसम्मतः।" इत्युक्तम्। श्यामारहस्यकारेणापि न्यासप्रयोगे सविन्दुलिपिन्यास एव लिखितः। विरूपाक्षसम्मतसविन्दुवर्णन्यासप्रमाणन्तु श्यामारहस्ये विरूपाक्षकृतकालीकवचे द्रष्टव्यम्। एतावता सविन्दुकनिर्व्विन्दुकयोरिच्छाविकल्पेऽपि सविन्दुकन्यास एव शिष्टैर्व्यवह्रियते। कालीतन्त्रसम्मतनिर्व्विन्दुकन्यासस्य व्यवहारो विरलतमः। तथाच हरतत्त्वदीधितौ—"सविन्दु-निर्व्विन्दूभयस्य शास्त्रसिद्धत्वादिच्छावैकल्पिकेऽपि साम्प्रदायिकाः सविन्दुमेव व्यवहरन्ति" इति। बहुषु हस्तलिखितकालीतन्त्रेषु लिपिन्यासे सविन्दुकः पाठो दृश्यते, स तु लिपिकरप्रमादोऽवगन्तव्यः; तन्त्रसार-श्यामारहस्य-नित्यनैमित्तिककाम्यार्चनपद्धतिकाराणामुक्तेर्व्विरोधात्। हरतत्त्वदीधितिकारेणापि तथाविधं कालीतन्त्रं दृष्ट्वा यद् "इह वर्णन्यासः कालीतन्त्रादौ सविन्दुकः कङ्कालमालिनीतन्त्रादौ तु निर्व्विन्दुरिति" इदं लिखितं तद्भ्रान्तिपूर्णम्। स्त्री-शूद्रयोस्तु निर्व्विन्दुर्व्वर्णन्यासः। तदुक्तं ताराहस्यधृततारार्णवे—

---

* यथाविधं। ख।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ ऌ ॡ वै हृदयं स्पृशेत् * ।
ए ऐ ओ औ ततोऽप्यं अः क ख ग घ पुनस्ततः ॥ १४ ॥
उक्त्वा च दक्षिणं भुजं स्पृशेत् साधकसत्तमः ।
ङ च छ ज समुच्चार्य्य झ ञ ट ठ ड ढ तथा ॥ १५ ॥
इति वामभुजे न्यस्य ण त थ द पुनः स्मरेत् ।
ध न प फ ब भ इति दक्षिणजङ्घके न्यसेत् ॥ १६ ॥
म य र ल व श ष स ह ल क्ष वामजङ्घके † ।
इति वर्णान् प्रविन्यस्य मूलविद्यां समुच्चरन् ‡ ॥ १७ ॥

"नादबिन्दु समोपेतं सर्व्ववर्णं व्यवस्थितम् ।
स्त्रीशूद्रयोरेतदेव नादबिन्दु विवर्जितम् ॥" इति ।

कालीतन्त्रसम्मतनिर्व्विन्दुकन्यासप्रयोगो यथा । हृदये—अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ ऌ ॡ नमः । दक्षभुजे—ए ऐ ओ औ अं अः क ख ग घ नमः । वामभुजे—ङ च छ ज झ ञ ट ठ ड ढ नमः । दक्षजङ्घायां—ण त थ द ध न प फ ब भ नमः । वामजङ्घायां—म य र ल व श ष स ह क्ष नमः । सबिन्दुकन्यासे तु प्रतिवर्णे अनुस्वारं संयोज्य न्यसेदिति विशेषः । सर्व्वत्र दक्षहस्ताङ्गुष्ठानामिकाग्रसंमेलनरूपतत्त्वमुद्रया न्यसेत् । दक्षभुजे तु दक्षहस्ततत्त्वमुद्रया न्यासा-सम्भवात् वामहस्ततत्त्वमुद्रया न्यसेत् । तथाच गौतमीये—

"मनसा वा न्यसेन्न्यासान् पुष्पेणैवाथ वा मुने ।
अङ्गुष्ठानामिकाभ्यां वा अन्यथा विफलं भवेत् ॥"

इत्यत्र भास्कररायमते—अन्तर्यागन्यासे मनसा,देवतागात्रे पुष्पेण, स्वगात्रे अङ्गुष्ठानामिकाभ्यां न्यसेत् । केचित्तु वाशब्दान् इच्छाविकल्पार्थान् मन्यन्ते । स्वगात्रे बाह्यन्यासे मनसा न्यासस्या-सङ्गतत्वात् इच्छाविकल्पार्थः सुष्ठुतया न प्रतिभाति । अतो भास्कररायमतमेव समीचीनम् ।

"एवमन्तः प्रविन्यस्य मनसातो बहिर्न्यसेत् ।"

इत्यगस्त्यसंहितावचनेन—

"स्वदेहेऽनामया कार्य्यः पुष्पेण सुरमूर्त्तिषु ।"

इति मेरुतन्त्रवचनेन चायमेवार्थं प्रकटयति । १३—१७ ।

व्यापकन्यासमाह मूलविद्यामित्यादि । मूलमन्त्रमुच्चरन् करतलाभ्यां शिर आदिपादान्तं

* हृदये न्यसेत् । क । † इति वामके । ग ।

‡ इति व्यापका प्रविन्यस्य मूलविद्यां समुच्चरेत् । ख, ग, घ ।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

gitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalga

सप्तधा व्यापकं कुर्य्याद्‌येन देवीमयो भवेत् ।
व्यापकत्वेन संन्यस्य ततो ध्यायेत् परां शिवाम् † ॥ १८ ॥
[पीठन्यासं ततः कुर्य्याद्‌येन देवीमयो भवेत् ।
हृत्सरोजे सुधासिन्धुमध्ये द्वीपं सुवर्णजम् ॥ १९ ॥
परितः पारिजातांश्च मध्ये कल्पतरुं ततः ।
तन्मूले हेमनिर्म्माणं द्वारचतुष्टयभूषितम् ॥ २० ॥
मण्डपं मन्दवातेन पराक्रान्तं सुधूपितम् ।
मन्त्रतन्त्र (मन्त्रैस्तत्र ?) प्रतिष्ठाप्य तत्र पूजां समाचरेत् ॥२१
श्मशानं तत्र सम्पूज्य तत्र कल्पद्रुमं यजेत् ।
तन्मूले मणिपीठञ्च नानामणिविभूषितम् ॥ २२ ॥
नानालङ्कारभूषाढ्यं मुनिदेवैश्च भूषितम् ।
शिवाभिर्ब्बहुमांसास्थिमोदमानाभिरन्ततः ॥ २३ ॥

पुनः पादादिशिरोऽन्तं मार्जयेदित्येको व्यापकन्यासः । इत्थं सप्तधा कुर्य्यात् । प्रतिवारं मूलमन्त्रमुच्चरेत् । तथाच हरतत्त्वदीधितिधृतनिगमकल्पलतावचनं—

"शीर्षादिपादपर्य्यन्तं पादादिशीर्षकं ततः ।
कराभ्यां मार्ज्जयेद् गात्रं व्यापकन्यास ईरितः ॥" इति ।

तत्रैव मूलमन्त्रस्य प्रणवपुटितत्वं सृष्ट्यादिभेदेन न्यासस्य विविधत्वमधिकारिनिरूपणञ्च प्रदर्शितम् । तन्त्रसारमतावलम्बिनस्तु तानि न व्यवहरन्ति । येन देवीमयो भवेदिति । "नादेवो देवमर्च्चयेत्" "देवीभूत्वा देवीं यजेत्" इत्यादि वचनादात्मनो देवीत्वापादनायैव न्यासाः करणीयाः । न्यासपदन्तु "असु क्षेपणे" इति धातुना निष्पन्नं, तेन स्वदेहे मूलदेवतायाः तद्रश्मिदेवतानाञ्च नसनं न्यासः । तथाच सौभाग्यभास्करे भास्कररायवाक्यं—"न्यासो नाम तत्तद्देवतानां तत्तदवयवेष्ववस्थापनम् । अवस्थितत्वेन भावनेति यावत् ।" इति । व्यापकन्यासेन तु मूलमन्त्रोच्चारणपूर्व्वकहस्ततलद्वयमार्ज्जनद्वारा सर्व्वेष्ववयवेषु मूलदेवताया अवस्थापनादात्मनो देवतामयत्वं सम्भावितम् । १७, १८ ।

"घ" पुस्तकादन्यत्रादर्शनात्, निबन्धेष्वनुद्धृतत्वात्, हरतत्त्वदीधितौ—"यद्यपि कालीतन्त्रवीरतन्त्रयोरनिरुद्धसरस्वतीविद्यापूजायां मातृकान्यासो नोक्तस्तथापि निगदितभूरिवचनैकवाक्य-

---

† श्लोकार्द्धमेतत् घ पुस्तके नास्ति ।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

चतुर्दिक्षु शवमुण्डास्थिताङ्गारास्थिभूषिताः ।
इच्छा ज्ञाना क्रिया चैव कामिनी कामदायिनी ॥ २४ ॥
रती रतिप्रिया नन्दा मध्ये चैव मनोन्मनी ।
ह्सौः सदाशिवेतुरक्ता सद्दाप्रे तेति तत्परम् ॥ २५ ॥
पद्मासनाय हृदयं पीठन्यास उदाहृतः ।
एवं देहमये पीठे चिन्तयेदिष्टदेवताम् [‡] ॥ २६ ॥
ध्यानमस्याः प्रवक्ष्यामि स्मरणाच्छिवतां व्रजेत् ।
करालवदनां घोरां मुक्तकेशीं चतुर्भुजाम् ॥ २७ ॥

त्वादन्यत्र निषेधाभावाच्च तस्यामपि स कर्त्तव्यः। अन्यथा तत्रानुक्तपीठन्यास-वीजन्यास-तत्त्वन्या सा-नामवश्यकर्त्तव्यत्वेऽपि तत्परिहारापत्तिः" इति लिखनाच्च बस्मनीस्था ऊनविंशादारभ्य षड्विंश-पर्य्यन्तमष्टौ पीठन्यासश्लोकाः प्रक्षिप्ता इति मत्वा न व्याख्यायन्ते। निबन्धेषु कालीपूजायां कुमारी-कल्पोक्तः पीठन्यासो दृश्यते। १९—२६।

ध्यानमाह करालेत्यादि। करालवदनां—करालं दन्तुरं उन्नतदंष्ट्राविशिष्टम् अथवा अभक्तानां भयानकं वदनं यस्यास्ताम्। "करालो दन्तुरे तुङ्गे भीषणे चाभिधेयवत्" इति मेदिनी। अत एव घोरां भयानकमूर्त्तिमित्यर्थः। "दारुणं भीषणं भीष्मं घोरं भयानकम्" इत्यमरः। मुक्तकेशीं—मुक्ता स्खलिताः केशा यस्यास्ताम्। चतुर्भुजाम्—चत्वारो भुजा यस्या-स्ताम्। कालिकां दक्षिणाम्—इति "दक्षिणकालिका" इति संज्ञामभिधातुं भिन्नपदत्वेनेदमुक्तम्। तथाच निर्व्वाणतन्त्रे दशमपटले—

"दक्षिणस्यां दिशि स्थाने संस्थितश्च रवेः सुतः ।
कालीनाम्ना पलायेत भीतियुक्तः समन्ततः ॥
अतः सा दक्षिणा काली त्रिषु लोकेषु गीयते ।
पुरुषो दक्षिणः प्रोक्तो वामा शक्तिर्निगद्यते ॥
वामया दक्षिणं जित्वा महामोक्षप्रदायिनी ।
अतः सा दक्षिणानाम्ना त्रिषु लोकेषु गीयते ॥
निर्गुणः पुरुषः कालात् स्तम्यते लुप्यते यतः ।
अतः सा दक्षिणानाम्ना त्रिषु लोकेषु गीयते ॥" इति ।

---

‡ बस्मनीमध्यस्थाः श्लोकाः केवलं घ पुस्तके विद्यन्ते ।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

कालिकां दक्षिणां दिव्यां मुण्डमालाविभूषिताम् * ।
सद्यश्छिन्नशिरःखड्ग-वामाधोर्द्ध्वकराम्बुजाम् ॥ २६ ॥
अभयं वरदञ्चैव दक्षिणोर्द्ध्वाधपाणिकाम् † ।
महामेघप्रभां श्यामां तथा चैव दिगम्बरीम् ‡ ॥ २७ ॥

दिव्यां—अलौकिकीं लौकिकेन्द्रियाद्यविषयामिति यावत्। तथा चार्जुनं प्रति भगवद्वाक्यम्—

"न तु मां शक्यसे द्रष्टुमनेनैव स्वचक्षुषा।
दिव्यं ददामि ते चक्षुः पश्य मे योगमैश्वरम् ॥" इति।

गुह्यचिन्तामणौ च—

"ज्ञात्वा देव्याः पदाम्भोजदर्शनं शिवचक्षुषा।" इत्यादि।

शिवचक्षुषा ज्ञानचक्षुषा, भौतिकचक्षुषो दर्शनायोग्यत्वात्। मुण्डमालाविभूषिताम्—असुराणां मुण्डनिचयै रचितमालया विभूषितां शोभायुक्तामित्यर्थः। यद्यप्यत्र मुण्डानां संख्यानिर्णयो नास्ति, तथापि विरूपाचकृतध्याने पञ्चाशन्मुण्डदर्शनात्, तदेव चिन्तनीयम्। तद्यथा—

"पञ्चाशन्मुण्डघटितमालाशोणितलोलिताम्।" इति।

मालेयं सद्यश्छिन्न-रक्तभूषितमुण्डानाम् अन्योन्यकेशैर्ग्रथिता, न तु सूत्रान्तरेण; पादपद्म-प्रलम्बिता च। इहानुक्तेऽपि ताराध्याने तथादर्शनात् ताराकाल्योरैकविधत्वाच्च। तथाच एक-जटाकल्पधृततन्त्रचूड़ामणौ—

"सद्यश्छिन्नगलद्रक्तैर्मुण्डै रक्तभूषितैः।
अन्योन्यकेशग्रथितैः पादपद्मप्रलम्बितैः ॥
पञ्चाशद्भिर्महामालाशोभितां परमेश्वरीम्।" इति।

सद्यश्छिन्नशिरःखड्ग-वामाधोर्द्ध्वकराम्बुजाम्—सद्यः सपदि छिन्नं यच्छिरः तच्च खड्गञ्च तौ वामयोरधोर्द्ध्व कराम्बुजयोर्यस्यास्ताम्। शिरस्तु वामाधःकरे खड्गस्तु वामोर्द्ध्व करे इति यथा-क्रममुपदेशः। अत्र "अध" इत्यदन्तः शब्दः, "सर्व्वे सान्ताः पचे अदन्ताः" इति न्यायात्। अथवा विसर्गलोपे सन्धिश्छान्दसः। अभयं वरदञ्चैव दक्षिणोर्द्ध्वाधपाणिकाम्—अत्र "प्राप्य" इति पदमध्याहार्य्यम्। तथाच—अभयं अभयमुद्रां वरदं वरदमुद्राञ्च प्राप्य दक्षिणावूर्द्ध्वाधपाणिकौ यस्यास्ताम्। अत्रापि "अध" शब्दोऽदन्तः। अत्र एवशब्द एवमर्थवाचकः, अव्ययानामनेकार्थ-

* करालीत्यादिविभूषितामित्यन्तश्लोकार्द्धद्वयस्थले ग घ पुस्तकयोः "दंष्ट्राकरालवदनां लम्बज्जिह्वां भयानकाम्" इति श्लोकार्द्धमात्रं दृश्यते। † दक्षिणाधोर्द्ध्वपाणिकाम्। ग। ‡ दिगम्बराम्। क। नीलमेघप्रभां तन्वीं घोररूपां दिगम्बराम्। ग। नीलमेघप्रभां तन्वीं

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

कण्ठावसक्तमुण्डालीगलद्रुधिरचर्च्चिताम् ।
कर्णावतंसतानीतशवयुग्मभयानकाम् ॥ २८ ॥
घोरदंष्ट्रां करालास्यां पीनोन्नतपयोधराम् [१] ।
शवानां करसङ्घातैः कृतकाञ्चीं हसन्मुखीम् ॥ २९ ॥

त्वात्। अथवा "इवि व्याप्तौ" इति भ्वादिगणीयैवधातोराङ्पूर्व्वात् कर्त्तर्य्यचि पृषोदरादित्वान्नलोपे "एव" इति पदं सिद्धम्। तथाहि अभयं वरदश्चैवौ प्राप्तौ दक्षिणोर्द्ध्वाधपाणिकौ यस्यास्ताम्। अत्रापि दक्षिणोर्द्ध्वपाणौ अभयमुद्रा, दक्षिणाधःपाणौ वरदमुद्रा, इति क्रमः। एवं वामाधःपाणौ सद्यश्छिन्नं मुण्डं, वामोर्द्ध्वपाणौ खड्गः, दक्षिणोर्द्ध्वपाणौ अभयमुद्रा, दक्षिणाधःपाणौ वरदमुद्रा, इत्यायुधचिन्ता। अभय-वरद-मुद्रयोर्लक्षणं तन्त्रसारधृतं यथा—

"अधःस्थितौ दक्षहस्तः प्रसृतौ वरमुद्रिका।
ऊर्द्ध्वीकृतो वामहस्तः प्रसृतोऽभयमुद्रिका॥" इति।

प्रसृतत्वं सङ्कोचनराहित्यम्। श्लिष्टाङ्गुलिरसङ्कुचितो दक्षहस्तः अधःस्थितः उत्तानभावेनैव निम्नाभिमुखत्वेन स्थितश्चेत्तदा वरमुद्रा। लौकिकव्यवहारेऽपि कस्यचिद्द वस्तुनो दाने दक्षहस्तस्य तथाकरणं दृश्यते। एवं श्लिष्टाङ्गुलिरसङ्कुचितो वामहस्त ऊर्द्ध्वमुखत्वेन स्थितश्चेदभयमुद्रा स्यात्। साधकस्य मुद्राप्रदर्शनकाले वामहस्ते, देव्यास्तु दक्षहस्तेऽभयमुद्रेति विशेषः। महामेघप्रभां श्यामां—महामेघस्य प्रभेव प्रभा यस्यास्तां, मध्यपदलोपी समासः। अत्र महापदप्रयोगात्, महाकालस्तुतौ—"स्वच्छन्दं ध्वान्तधाराधररुचिरुचिरे" इत्यत्र ध्वान्तपदप्रयोगात्, तथा विरूपाचोक्तध्याने "नीलाञ्जनचयप्रख्याम्" इत्यत्र नीलादिपददर्शनाच्चात्यन्तैव कृष्णवर्णेति सूचितम्। देव्याः कृष्णवर्णत्वे हेतुमाह—महानिर्व्वाणतन्त्रे त्रयोदशोल्लासे—

"श्वेतपीतादिको वर्णो यथा कृष्णे विलीयते।
प्रविशन्ति तथा काल्यां सर्व्वभूतानि शैलजे॥
अतस्तस्याः कालशक्तेर्निर्गुणाया निराकृतेः
हिताय्याः प्राप्तयोगानां वर्णः कृष्णो निरूपितः॥" इति।

"श्यामाम्" इत्यनेन—

"शीतकाले भवेदुष्णा चोष्णकाले च शीतला।
प्रतप्तकाञ्चनाभासा श्यामा स्त्री परिकीर्त्तिता॥

इत्येतद्वचनाक्रान्तत्वं ज्ञापितं, न तु श्याववर्णत्वम्, अतः सर्व्वसामञ्जस्यमिति। दिगम्बरीं—दिक

[१] घोररूपां दिगम्बरीम्। घ। [१] श्लोकार्द्धमेतत् ग घ पुस्तकयोर्नास्ति।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

gitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalga

सृक्कद्वयगलद्रक्तधाराविस्फुरिताननाम् ।
घोररावां महारौद्रीं * श्मशानालयवासिनीम् ॥ ३० ॥
बालार्कमण्डलाकारलोचनत्रितयान्विताम् † ।
दन्तुरां दक्षिणव्यापिमुक्तालम्बिकचोच्चयाम् ॥ ३१ ॥
शवरूपमहादेवहृदयोपरिसंस्थिताम् ।
महाकालेन च समं विपरीतरतातुराम् ‡ ॥ ३२ ॥
शिवाभिर्घोररावाभिश्चतुर्दिक्षु समन्विताम् * ।
सुखप्रसन्नवदनां स्मेराननसरोरुहाम् † ॥ ३३ ॥

अम्बरं परिधानवसनं यस्यास्ताम्। "अम्बरं व्योम्नि वाससि" इत्यमरः। बहुव्रीहिसमासे गौरादित्वात् ङीष्। एतेन "नग्ना" इति व्यञ्जितम्। कण्ठावसक्तमुण्डालीगलद्रुधिरचर्चिताम्—कण्ठे अवसक्ता लग्ना या मुण्डानाम् आली श्रेणी मुण्डमालेति यावत्, तस्या गलन्ति यानि रुधिराणि तैश्चर्चितामनुलिप्तामिति यावत्। कर्णावतंसतानीतशवयुग्मभयानकाम्—कर्णयोरवतंसताम् अलङ्कारतां नीतं प्रापितं यच्छवयुग्मं मृतनरशिशुदेहयुगलं तेन भयानकाम्। शरयुग्मेति पाठे शरयुग्मं बाणयुग्ममित्यर्थः। "घोरबाणावतंसा" इति "प्रेतकर्णावतंसा" इति च—

"शकुन्तपक्षसंयुक्तबाणकर्णविभूषिणीम्।" इति
"विगतासुकिशोराभ्यां कृतकर्णावतंसिनीम्।"

इति "दर्शनादुभयमेव पाठः।" इति तन्त्रसारकारः। शवयुग्मेति पाठस्य प्रचारबाहुल्यं दृश्यते। वस्तुतस्तु ध्यानमन्त्रपाठे एकतर एव पाठ्यः, ध्याने तु कर्णाधः प्रेतयुग्मं कर्णोर्द्ध्वं बाणयुग्मं ध्येयम्, इति वृद्धोपदेशः। घोरदंष्ट्रां—घोरा दृढतरत्वाद् भीमा दंष्ट्रा यस्यास्ताम्। करालास्यां—करालः ललजिह्वा आस्यं मुखे यस्यास्ताम्। "करालस्तीक्ष्णखड्गी च निर्गजिह्वा-भयानके" इति कोषः। पीनोन्नतपयोधरां—पीनौ स्थूलौ उन्नतौ च

---

* स्मितमुखीम्। घ। † बालार्कमण्डलाकारां विनिवासुन्नतस्तनीत्। ग घ। ‡ महाकालेन वै सार्द्धमुपविष्टरतातुराम्। ख। महाकालेन सार्द्धं तामुपविष्टां रतातुराम्। ग। महाकालेन च समसुपविष्टां रतातुराम्। घ।

* श्लोकार्द्धमेतत् क पुस्तके नास्ति। † श्लोकार्द्धमेतत् ग पुस्तके नास्ति।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

पयोधरौ स्तनौ यस्यास्तादृशीम्। शवानां करसङ्घातैः कृतकाञ्चीं—शवानां करसङ्घातैः छिन्नकरसमूहैः कृता काञ्ची मेखला यया तादृशीम्। तथाच—"मृतहस्तसहस्रैस्तु बद्धकाञ्चीं दिगम्बरीम्" इति। हसन्मुखीं—हसत् हास्ययुक्तं मुखं यस्यास्तादृशीम्। सृक्क-द्वयगलद्रक्तधाराविस्फुरिताननां—सृक्क-सृक्कणी-सृक्किणीति शब्दाः ओष्ठाधरयोः प्रान्तभागद्वयवाचकाः तत्र सृक्कशब्दोऽदन्तो नान्तश्च। सृक्कद्वयात् ओष्ठाधरप्रान्तभागद्वयात् गलन्त्यौ ये रक्तधारे पीता-वशिष्टासुरशोणितानां प्रवाहौ ताभ्यां विस्फुरितं प्रकाशितम् आननं यस्यास्तादृशीम्। घोररावां—घोरः असुराणां अभक्तानाञ्च भयप्रदः रावः शब्दः यस्यास्तादृशीम्। महारौद्रीं—अतिशयोग्राम्। "रौद्रन्तूग्रममी त्रिषु" इत्यमरः। श्मशानालयवासिनीं—श्मशानं शवदाहस्थानमेव आलयः वासस्थानं तत्र वस्तुं वासं कर्त्तुं शीलं यस्यास्तादृशीम्। तथाहि "श्मशानवह्निमध्यस्थाम्", इत्यादि। बालार्कमण्डलाकारलोचनत्रितयान्वितां—बालश्चासौ अर्कश्चेति, बालार्कः प्रथमोदितसूर्य्य इत्यर्थः, तस्य मण्डलमिव आकारो यस्य तादृशेन लोचनत्रितयेन प्रातरुदित-सूर्य्यमण्डलसदृशरक्तवर्णैस्त्रिभिर्नेत्रैरित्यर्थः अन्वितां युक्ताम्। दन्तुरां—उपर्य्युपरिदन्तविशिष्टाम्। दक्षिणव्यापि-मुक्तालम्बि-कचोच्चयां—दक्षिणं दक्षिणाङ्गं व्याप्नोतीति दक्षिणव्यापी, शिवहृदि पदार्पणभङ्ग्या केशसमूहस्य दक्षिणाङ्गव्यापकत्वं प्रतीयते, मुक्तः वेणीबन्धनरहितः अत एव आलम्बी—आ सम्यक् लम्बते इत्यालम्बी लम्बमान इत्यर्थः, एवम्भूतः कचोच्चयः केशसमूहो यस्यास्ताम्। शवरूप-महादेव-हृदयोपरिसंस्थितां—शवस्य रूपमिव रूपं यस्य स चासौ महादेवश्चेति शवरूप-महादेवः, तस्य हृदयोपरिसंस्थिताम्। वस्तुतः शिवस्य शवत्वं न, रूपपदस्याव्यावर्त्तकत्वापत्तेः, योगिनीतन्त्रोक्तध्याने "योगनिद्राधरं शम्भुम्" इति दर्शनाच्च। कुब्जिकातन्त्रे देव्या दक्षिणपादं शवहृदये उक्तम्। तथाहि—

"शवस्य हृदये चैव दक्षपादनिषेविताम्।" इति।

योगिनीतन्त्रे वामपादं शवहृदये उक्तं, यथा—

"वामपादं शवहृदि दक्षिणं लोललाञ्छिताम्।" इति।

एवमुभयप्राप्तौ गुरूपदेशाद्विकतरमवधार्य्य चिन्तनीयम्। तथाहि गुप्तसाधनतन्त्रे षष्ठपटले—

"आलीढ़ं कीदृशं नाथ प्रत्यालीढ़न्तु कीदृशम्।
कथं सा दक्षिणा काली श्मशानालयवासिनी॥"

इति देवीप्रश्नस्योत्तरम्—

"आलीढ़ं वामपादन्तु प्रत्यालीढ़न्तु दक्षिणम्।
संहाररूपिणी काली जगन्मोहनकारिणी॥
वह्निरूपा महामाया सत्यं सत्यं न संशयः।
अत एव महेशानि श्मशानालयवासिनी॥

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

gitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalga

आलीढ़पादा सा देवी प्रत्यालीढ़ा चणे चणे।
गुरुणा यस्य यत् प्रोक्तं तत् तस्य ब्रह्मसंहितम् ॥" इति।

अनेन श्मशानालयवासस्यापि कारणमुच्यते। देव्याः शववाहनत्वस्य कारणमाह तोड़लतन्त्रे प्रथमपटले—

"या चाद्या परमा विद्या द्वितीया भैरवी परा।
त्रैलोक्यजननी नित्या सा कथं शववाहना ॥"

इति देवीप्रश्नस्योत्तरे—

या चाद्या परमेशानि स्वयं कालस्वरूपिणी।
श्रीशिवस्य हृदम्भोजे स्थिता संहाररूपिणी ॥
अत एव महाकालो जगत्संहारकारकः।
संहाररूपिणी काली यदा व्यक्तस्वरूपिणी ॥
तदैव सहसा देवि शवरूपः सदाशिवः।
तत्क्षणाच्चसलापाङ्गि सा देवी शववाहना ॥
* * * *
यस्मिन् व्यक्ता महाकाली शक्तिहीनः सदाशिवः।
शक्त्या युक्तो यदा देवि तदैव शिवरूपकः ॥
शक्तिहीने शवः साक्षात् पुरुषत्वं न मुञ्चति।" इति।

महाकालेन च समं विपरीतरतातुराम्—महाकालेन स्वभैरवेण समं सह विपरीतं व्यत्ययेन कृतं यद्रतं सुरतव्यापारः तस्मिन् आतुरां विचित्रचित्तामित्यर्थः। वस्तुतस्तु तदानीं न रतावस्था, किन्तु सदाशिवरूपदिगम्बरमहाकालोपरि दिगम्बरीभावेन देव्याः स्थितत्वादुत्प्रेक्षा इति भावः। किञ्च, शिवशक्तिमिथुनभावं विना सृष्ट्यादिकं न सम्भवतीति तान्त्रिकसिद्धान्तः। शिव-शक्त्योरविनाभावसम्बन्धेऽपि सृष्ट्यादिव्यापारे शक्तेः क्रियायां अनुभूयमानत्वेन प्राधान्यात् शक्तिरेव सर्वं करोतीति प्रतिभासते; अतः सृष्ट्याद्यर्थं मिथुनभावेऽपि शक्तेरेव प्राधान्यात् अत्र महाकालेन समं देव्या विपरीतरतावस्था उत्प्रेक्षिता।

शिवाभिर्घोररावाभिश्चतुर्दिक्षु समन्विताम्—घोररावाभिः, घोरः रावः शब्दो यासां ताभिः, शिवाभिः शृगालैः, "स्त्रियां शिवा भूरिमाय-गोमायु-मृगधूर्त्तकाः। शृगाल-वञ्चक-क्रोष्टु-फेरु-फेरव-जम्बुकाः ॥" इत्यमरः। "पुंव्यक्तावपि शिवाशब्दो नित्यं स्त्रीलिङ्ग इत्यर्थः" इत्यमरटीकायां महेश्वरः। चतुर्दिक्षु समन्ततः समन्वितां वेष्टितामित्यर्थः। सुखप्रसन्नवदनां—सुखं सुखकरं भक्तानां आनन्ददायकमित्यर्थः, प्रसन्नं प्रफुल्लञ्च वदनं यस्यास्ताम्। स्मेराननसरोरुहां—स्मेरं विकसितम् आननसरोरुहं मुखपद्मं यस्यास्तां, विकसितपद्मतुल्यसुन्दरमुखीमित्यर्थः। "योगिनी-

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

[योगिनीचक्रसहितां कालिकां भावयेत् सदा * ।]
एवं सञ्चिन्तयेत् कालीं सर्व्वकामार्थसिद्धये † ॥ २४
अथार्च्चनविधिं वक्ष्ये देव्याः सर्व्वसमृद्धिदम् ‡ ।
[येनानुष्ठितमात्रेण स्वयं भैरवरूपवान् § ॥ २५ ॥]
येनानुष्ठितमात्रेण भवाब्धौ न निमज्जति ।
अनेकहेमरत्नादिमाणिक्यवरसिद्धिदम् ॥ २६
इन्द्रादिसुरवृन्दानां साधनैकफलप्रदम् ।
विपक्षकुलसंहारकारणं पौरुषप्रदम् ¶ ॥ २७
शान्तिकं * पौष्टिकञ्चैव वशीकरणमुत्तमम् ।
मारणोच्छेदजनकमाकृष्टिकरमुत्तमम् † ॥ २८

चक्रसहितां कालिकां भावयेत् सदा" इति पाठस्तु पुस्तकान्तरेषु निबन्धेषु च अनुपलम्भात् प्रक्षिप्त इति मत्वा अत्रोपेक्षितः । एवं सञ्चिन्तयेत् कालीं सर्व्वकामार्थसिद्धये—सर्व्वेषां कामानाम् अर्थानाञ्च सिद्धये एवं एवम्प्रकारां कालीं सञ्चिन्तयेत् ध्यायेत् । अत्र कामार्थशब्दाभ्यां तदितर-धर्म्ममोक्षरूपपुरुषार्थद्वयमपि गृह्यते कालिकोपासनेन चतुर्व्वर्गप्राप्तिश्रवणात् । अत एतद्ध्यानेन धर्म्मार्थकाममोक्षरूपचतुर्व्वर्गप्राप्तिः स्यादित्यर्थः । तन्त्रसारे तु कालीतन्त्रोक्तध्याने "सर्व्वकामार्थ-सिद्धये" इत्यत्र "सर्व्वकामसमृद्धिदाम्" "श्मशानालयवासिनीम्" एतत्पाठद्वयं दृश्यते । एतत्-पाठद्वयमपि प्रचरद्रूपम् । "श्मशानालयवासिनीम्" इति पाठे तु पौनरुक्त्यवारणाय ब्रह्मानन्दस्वामी एवमाह—"श्मशानं रुद्रस्थानं, तत्तु नित्यं कैलासस्य दक्षिणशृङ्गे, अत्रैव कालिकालयः, तत्र वासिनीम्" इति । २७—२४

---

* बन्धनीस्थं श्लोकार्द्धं केवलं ख पुस्तके विद्यते । † एवं सञ्चिन्तयेत् कालीं श्मशाना-लयवासिनीम् । ख । ग पुस्तके एतत् श्लोकार्द्धं नास्ति । एवं सञ्चिन्त्य तां कालीं प्राणायामं समाचरेत् । घ । ‡ अनुष्ठानविधिं वक्ष्ये देव्याः सर्व्वसमृद्धिदम् । ख ग । घ पुस्तके एतत्-श्लोकार्द्धस्थले "मानसैरर्च्चयित्वा तु साक्षात् सिद्धीश्वरो भवेत् । यन्त्रपीठार्च्चनं वक्ष्ये देव्याः सर्व्व-समृद्धिदम् ।" इति श्लोको दृश्यते । § बन्धनीस्थं श्लोकार्द्धं केवलं "क" पुस्तके दृश्यते । ¶ शरणप्रदम् । ख । * शान्तिदं । घ । † मारणोच्चाटजनकं तथाकर्षणमुत्तमम् । ग । मारणोच्छेदनकरम् । घ ।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

gitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalga

समस्तशोकशमनमानन्दाब्धौ निमज्जनम् *।
चतुःसमुद्रपर्य्यन्तमेदिनीसाधनोत्तमम् † ॥ ३८
स्त्रीरत्नकुलसन्दायि पुत्रपौत्रविवर्द्धनम्।
आदौ यन्त्रं प्रवक्ष्यामि यज्ज्ञात्वाऽमरतां व्रजेत् ॥ ४०
आदौ त्रिकोणं विन्यस्य त्रिकोणं तद्बहिर्न्यसेत्।
ततो वै विलिखेन्मन्त्री त्रिकोणत्रयमुत्तमम् ॥ ४१

यन्त्रमाह—आदौ त्रिकोणमित्यादि। आदौ त्रिकोणमेकं ततस्त्रिकोणं गर्भीकृत्य अपरं त्रिकोणमेकं, तत एतत्त्रिकोणद्वयं गर्भीकृत्य क्रमशस्त्रिकोणत्रयं विलिखेत्। एवंक्रमेण त्रिकोणपञ्चकं भवति। सर्व्वाणि त्रिकोणानि समबाहुकानि अधोमुखानि च कुर्य्यात्। वामकेश्वरतन्त्रादौ श्रीचक्रान्तर्गतत्रिकोणचक्रे बाहुत्रयस्य इच्छा-क्रिया-ज्ञानेतिशक्तित्रयरूपत्वकथनात् शक्तित्रयस्य साम्यात् बाहूनामपि समपरिमाणत्वं भवितुमर्हति। अत्रापि तथैव, शक्तिसाम्यात्। रेखागणितरीत्यापि वृत्तान्तर्गतत्रिकोणबाहूनां परिमाणसाम्यं युक्तियुक्तम्। अधोमुखकरणे तु तारारहस्यधृतवचनं प्रमाणम्। तद्यथा—

"यत्र यत्र महाविद्या शक्तिविद्या प्रकाशिता।
तत्र तत्र त्रिकोणञ्च अधोमुखमुदीरितम्॥
देवत्रिकोणे कर्त्तव्ये ऊर्द्ध्वास्यं परिकीर्त्तितम्।"

अधोमुखत्रिकोणस्य तु शक्तिरिति संज्ञा। अस्याङ्गे वामकेश्वरतन्त्रस्य भास्कररायकृतसेतुबन्धाख्यटीकायामेवमुक्तम्—"यदाशाभिमुखो मन्त्री चक्रराजं समुद्धरेत् सैव पूर्व्वादिक्। तामारभ्य प्रादक्षिण्येनेतराः सप्त दिशः। ईशानादाग्नेयपर्य्यन्तामेकां तिर्य्यग्रेखां कृत्वा तदीशानाग्रात् तदाग्नेयाग्राच्चारभ्य पश्चिमदिक्पर्य्यन्ते द्वे रेखे समाकृष्य पश्चिमस्यां दिशि ते मेलयेत्। तदिदं स्वाभिमुखाग्रत्रिकोणं भवति। अस्य शक्तिरिति संज्ञा।" तन्त्रसारादिधृतकालीतन्त्रवचनेषु "वृत्तं विलिख्य विधिवल्लिखेत् पद्मं सुलक्षणम्। ततो वृत्तं विलिख्यैव लिखेद्भूपुरमेककम्॥" इत्यत्र "ततो वृत्तं समालिख्य लिखेदष्टदलं ततः। वृत्तं विलिख्य विधिवल्लिखेद्भूपुरमेककम्॥" इति पाठो दृश्यते, पद्मदलसंख्याकथनादयमेव पाठः समीचीनतया प्रतिभाति। तदनन्तरं वृत्तपञ्चकं गर्भीकृत्य एकं वृत्तं, तद्बहिरष्टदलं पद्मम्, तद्बहिश्चतुर्द्वारसमन्वितं चतुरस्राकारं भूपुरं पृथ्वीमण्डलं लिखेत्। समबाहुकोणकं चैकं चतुरस्रं, एतदेव भूपुरम्।

---

* मानन्दाब्धिविधूदयम्। ख। मानन्दादिविभूतिदम्। ग। मानन्दाब्धिविभूतिदम्। घ।
† तां धरित्रीं साधयेत्तथा। क।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

वृत्तं विलिख्य विधिवल्लिखेत् पद्मं सुलक्षणम्।
ततो वृत्तं विलिख्यैव लिखेद्भूपुरमेककम् ॥ ४२
चतुरस्रं चतुर्द्वारमेवं मण्डलमालिखेत्।
पीठपूजां ततः कृत्वा स्ववामेऽर्घ्यं न्यसेत् प्रिये * ॥ ४३

"भूगृहं चतुरस्रं स्यादष्टवज्रविभूषितम्।"

इति राघवभट्टधृतवचनात्। अत्र "अष्टवज्रविभूषितम्" इत्युक्तावपि वज्ररहितचतुरस्रस्यापि भूगृहसंज्ञेतिव्यवहारः। अत्रानुक्तावपि प्रथमत्रिकोणमध्यस्थले एकपङ्क्तौ निजबीजं बिन्दुं लज्जाबीजञ्च क्रमेण लिखेत्। तद्यथा कालीरहस्यधृतमहाकालसंहितायाम्—

"उत्तरास्यो लिखेद् यन्त्रं गुरुं नत्वा शिवं स्मरन्।
निजबीजं ततो बिन्दुं लज्जाबीजमतः परम् ॥
पङ्क्तिक्रमे लिखित्वा तु त्रिकोणपञ्चकं क्रमात्।
लिखित्वा वेष्टयेत् सम्यग्वृत्तेन परमेश्वरि ॥
ततोऽष्टदलपद्मञ्च ततो वृत्तं लिखेद्बुधः।
ततो द्वाराणि कुर्व्वीत चतुर्दिक्षु समाहितः ॥
एवं यन्त्रं प्रकुर्व्वीत कालिकापूजने बुधः।" इति।

तन्त्रसारधृतकुमारीकल्पे च—

"मध्ये तु वैन्दवं चक्रं बीजमायाविभूषितम्।" इति।

निजबीजं क्रीं, लज्जाबीजं ह्रीं, बिन्दुं बिन्दुरूपं चिह्नम्। एतत्त्रितयलिखनं तन्त्रसारकारादीनामप्यभिप्रेतम्। यत्तु—

"आदौ त्रिकोणं विन्यस्य त्रिकोणं तद्बहिर्न्यसेत्।
बहिस्त्रिकोणमालिख्य षट्कोणञ्च लिखेद् बहिः ॥
मध्ये तु वैन्दवं चक्रं बीजमायाविभूषितम्।
षट्कोणात्तु बहिर्वृत्तं ततश्चाष्टदलं लिखेत् ॥
बहिर्वृत्तेन संयुक्तं भूपुरेणैव वेष्टितम्।
ज्ञात्वैवं मुक्तिमाप्नोति यन्त्रसेनं न संशयः ॥"

इति कुमारीतन्त्रवचने त्रिकोणत्रयात् परं षट्कोणलेखनमुक्तम्, तत् त्रिकोणद्वयपरम्। कालीतन्त्रवचनेन—

* ऽर्घ्यञ्च विन्यसेत्। क।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

"अधोवक्त्रं पञ्चकोणमन्योऽन्यञ्चाप्यलग्नकम् ।
एवम्भूतं महायन्त्रं स्थापयेत् सिंहविष्टरे ॥"

इति सिद्धेश्वरतन्त्रवचनेन च सह विरोधापत्तेः, सम्भवत्येकवाक्यत्वे भिन्नवाक्यकल्पनाया अन्याय्यत्वाच्च । पञ्चकोणं पञ्चत्रिकोणम् । सिंहविष्टरे सिंहासने । तन्त्रसारे तु यन्त्रान्तरमुक्तं, तद्यथा—

"शक्त्यग्निभ्याञ्च षट्कोणं शक्तिभिश्च नवात्मकम् ।
पद्मं वसुदलं भूमिपुरञ्चतुर्द्वारसंयुतम् ॥"

ऊर्द्ध्वमुखत्रिकोणस्याग्निरिति संज्ञा । शक्त्यग्निभ्याम् अधोमुखोर्द्ध्वमुखत्रिकोणाभ्यां षट्कोणम् । अयमर्थः—आदौ अधोमुखत्रिकोणमेकं विलिख्य पश्चादूर्द्ध्वमुखेनैकेन त्रिकोणेन तद्भेदयित्वा षट्कोणं सम्पाद्यम् । शक्तिभिश्च नवात्मकम्—ततः तत्षट्कोणं गर्भीकृत्य अन्योन्यासंसक्तमधोमुखत्रिकोणद्वयं लिखेदित्यर्थः । तद्बहिरष्टदलं पद्मं; तद्बहिश्चतुर्द्वारसंयुतं भूगृहम् । कालीतन्त्रोक्तयन्त्रमेव प्रचरतितराम् । यन्त्राधारमाह स्वतन्त्रे—

"लिखनं यन्त्रराजस्य हैमे पात्रे विशिष्यते ।
ताम्रे वापि च कर्त्तव्यं यन्त्रं पूजार्थमेव हि ॥
न दैत्तले न वा काष्ठे न पाषाणे न मार्त्तिके ।
कालीयन्त्रं प्रकुर्वीत साधकोऽभीष्टसिद्धये ॥" इति ।

लिखनद्रव्यमाह कालीनिगमे—

"कुसीद-कर्पूरका-चन्दनैश्च लिखेत् सुयन्त्रं वरताम्रपात्रे ।" इति ।

तन्त्रान्तरे च—

"चन्दनागुरु-कर्पूर-सिन्दूररजसापि वा ।
कस्तूरी-कुङ्कुमैर्देव्यै रोचना-लाक्षया तथा ॥" इति ।

लेखनीमाह श्रीतत्त्वचिन्तामणौ—

"यन्त्रराजं लिखेन्मन्त्री स्वर्ण-रजतशलाकया ।
पुष्पेण विलिखेद्वापि बिल्वस्य कण्टकेन वा ॥" इति ।

तन्त्रान्तरे च—

"तन्मध्ये विलिखेद्यन्त्रं सुवर्णेन कुशेन वा" इति ।

मूलमन्त्रमुच्चार्य यन्त्रमालिखेत् । तथाहि शाक्तानन्दतरङ्गिणीधृतसम्मोहनतन्त्रे—

"मूलमुच्चारयन् सम्यगालिखेद्यन्त्रमुत्तमम् ।" इति । ४१—४२

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

मूलविद्यां षड़ङ्गेन मूलमन्त्रेण चार्च्चयेत् ।
ततो हृदयपद्मान्तःस्फुरन्तीं परमां कलाम् ॥ ४४
यन्त्रमध्ये समावाह्य न्यासजालं * प्रविन्यसेत् ।
ततो ध्यात्वा महादेवीमुपचारान् प्रकल्पयेत् † ॥ ४५

पूजामाह—पीठपूजां ततः कृत्वेति । तत्क्रमः—प्रथमं स्वहृदये देवतां ध्यात्वा तत्र मानसोपचारैः सम्पूज्य ताम्राद्याधारे यन्त्रं तदशक्तौ यन्त्रपुष्पं संस्थाप्य तदन्यस्मिन् विहिताधारे वा कुमारीकल्पाद्युक्तां पीठपूजां विधाय स्ववामे वीरार्घपात्राणि अशक्तौ द्वे एकं वा संस्थाप्य तत्र षड़ङ्गपूजां कृत्वा देवीमावाहयेत् । तत्र क्रमः—प्रथमं शिरसि द्वादशार्णसरसीरुहोदरे श्रीगुरुं ध्यात्वा मानसोपचारैस्तं सम्पूज्य "नमोऽस्तु गुरवे तस्मै स्वेष्टदेवस्वरूपिणे । यस्य वागमृतं हन्ति विषं संसारसंज्ञकम् ॥" इत्यनेन प्रणम्य "श्रीगुरो दक्षिणामूर्त्ते भक्तानुग्रहकारक । अनुज्ञां देहि भगवन् यन्त्रराजार्च्चनाय मे ॥" इति गुर्व्वाज्ञां प्रार्थ्य प्राणायामं षड़ङ्गन्यासञ्च कुर्य्यात् । तत आत्मानं कामकलारूपं विभाव्य कराभ्यां पुष्पाञ्जलिमादाय तं मौटिकाम्भोजत्वेन कल्पयित्वा कूर्म्ममुद्रां बध्वा हृदि चक्रराजे देवीं यथोक्तरूपां सपरिवारां पूर्व्वोक्तध्यानाभिलापेन ध्यात्वा तेजोरूपतामापाद्य अन्तर्मुद्राप्रयोगेण मूलाधारात् कुण्डलिनीमुत्थाप्य तया सह षट्चक्रभेदक्रमेण हृदयान्तः स्फुरन्तीं तेजोमयीं सुषुम्नामार्गेण ब्रह्मरन्ध्रं नीत्वा परतेजःसङ्गतेनामृतमहाम्बुधौ क्षणं विश्राम्य शिवशक्तिसामरस्यसुखमनुभूय "महापद्मवनान्तःस्थे कारणानन्दविग्रहे । सर्व्वहितरते मातरेह्येहि परमेश्वरि ॥ एह्येहि देवदेवेशि कालिके देवपूजिते । परामृतप्रिये शीघ्रं सान्निध्यं कुरु सिद्धिदे ॥ देवेशि भक्तिसुलभे परिवारसमन्विते । यावत् त्वां पूजयिष्यामि तावत् त्वं सुस्थिरा भव ॥" इत्यावाहनमन्त्रान्ते "यं" इति वायुबीजाभिलापेन वहन्नासापुटाध्वना कूर्म्ममुद्रामुद्रितकरस्थपुष्पाञ्जलौ तत्तेजः समानीय पीठान्तःकल्पितमूर्त्तेः शिरसि ब्रह्मरन्ध्रस्थाने सन्निवेश्य महाकालाङ्कस्थां सावरणां श्रीमद्दक्षिणकालिकां सर्व्वावयवभावेन ध्यायन् पीठान्तःकल्पितमूर्त्तेः शिरसि ब्रह्मरन्ध्रस्थाने सन्निवेशिता या तेजोरूपा देवी तां कल्पितमूर्त्तेः सर्व्वेष्ववयवेषु व्यापकत्वेनावाहयेत् । आवाहनानन्तरम् आवाहनाङ्गभूतानि स्थापन-सन्निधापन-सन्निरोधन-सम्मुखीकरणान्यपि कुर्य्यात् । तत्रायं प्रयोगः—महाकालसहितश्रीमद्दक्षिणकालिके "इह आगच्छ आगच्छ" इत्यावाहनीमुद्रया आवाह्य "इह तिष्ठ तिष्ठ" इति स्थापनीमुद्रया संस्थाप्य "इह सन्निहिता भव" इति सन्निधापनीमुद्रया सन्निधाप्य "इह सन्निबध्यस्व" इति सन्निरोधनीमुद्रया सन्निरुध्य "मम पूजां गृहाण" इति सम्मुखीकरणमुद्रया आवाहित-स्थापित-सन्निधापित-सन्निरुद्धो-

* न्यासमेवं । क । † मुपचारैः प्रपूजयेत् । क ।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

gitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalga

नमस्कृत्य महादेवीं ततः आवरणं यजेत् ।
कालीं कपालिनीं कुल्लां कुरुकुल्लां विरोधिनीम् ॥ ४६
विप्रचित्तान्तु सम्पूज्य बहिः षट्कोणके ततः * ।
उग्रामुग्रप्रभां दीप्तां तथा मध्यत्रिकोणके ॥ ४७
नीलां घनां वलाकाञ्च तथैवान्यत्रिकोणके † ।
मात्रां मुद्रां मिताञ्चैव तथैवान्तस्त्रिकोणके ‡ ॥ ४८
सर्व्वाः श्यामा असिकरा मुण्डमालाविभूषिताः § ।
तर्ज्जनीं वामहस्तेन धारयन्त्यः शुचिस्मिताः ¶ ॥ ४९
ततो वै मातरः पूज्या ब्राह्मी नारायणी तथा * ।
माहेश्वरी च चामुण्डा कौमारी चापराजिता ॥ ५०

कृततेजस्कां कल्पितमूर्त्तिं पूजाग्रहणानुकूलानुष्ठानवत्त्वेन सम्मुखीकुर्य्यात् । इत्थं विधाय प्राणप्रतिष्ठां कुर्य्याद् यथा—"आं ह्रीं क्रों हं सः महाकालसहितश्रीमद्दक्षिणकालिकायाः प्राणा इह प्राणाः । आं ह्रीं क्रों हं सः महाकालसहितश्रीमद्दक्षिणकालिकाया जीव इह स्थितः । आं ह्रीं क्रों हं सः महाकालसहितश्रीमद्दक्षिणकालिकायाः सर्व्वेन्द्रियाणि । आं ह्रीं क्रों हं सः महाकालसहितश्रीमद्दक्षिणकालिकाया वाङ्-मन-चक्षुः-श्रोत्र-घ्राण-प्राणा इहागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा ।" इति मन्त्रचतुष्टयेन प्राणप्रतिष्ठां लेलिहानमुद्रया कुशविष्टरेण वा कृत्वा "अवगुण्ठिता भव" इत्यभिलापेन "हुं" इत्युच्चार्य्य अवगुण्ठनमुद्रया प्राणप्रतिष्ठाङ्गम् अवगुण्ठनञ्च कृत्वा देव्यङ्गे षडङ्गविन्यासेन सकलीकृत्य मूलविद्यां, "ओं ह्रीं हौं श्रूं ग चुं" इति दीपनीविद्यां विन्दुयुक्तां अकारादिक्षकारान्तां मातृकाञ्च उच्चार्य्य अर्घ्यजलेन देव्याः त्रिः प्रोक्षयेत् । ततो महामुद्रानामकपरमीकरणमुद्रया परमीकृत्य छोटिकाभिर्दशदिग्बन्धनं कृत्वा "वं" इत्यमृतबीज-मुच्चार्य्य धेनुमुद्रया अमृतधारया अभिषिञ्चन् अमृतीकुर्य्यात् । ततो योनि-खड्ग-मुण्ड-वरा-ऽभीति-परयोनिमुद्राः प्रदर्श्य यथाशक्त्युपलब्धबाह्योपचारैः पूजयेत् । केचित् साम्प्रदायिका आवाहनादिषु महाकालसहितेतिपदं न वदन्ति । ४३—४६

---

* कुधः । ग घ । † तथापरत्रिकोणके । ख ग । तथैवापरके त्रिके । घ ।
‡ तथैवान्यत्रिकोणके । क । त्वसैवान्यत्रिकोणके । ग । § विभूषणाः । ग घ । ¶ धारयन्त्यश्च सस्मिताः । क घ । * एतच्छ्लोकार्द्धस्थले घपुस्तके—"ततो वै मातरः पूज्याः पद्मेष्वष्टदलेषु च । तत्रादौ पूजयेद्ब्राह्मीं ततो नारायणीं तथा ॥" इति श्लोको दृश्यते ।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

वाराही च तथा पूज्या नारसिंही तथैव च।
सर्व्वासामपि देवीनां वलिः पूजा तथैव च * ॥ ५१
अनुलेपनकं गन्धो धूप दीपौ तथैव च †।
त्रिस्त्रिः पूजा प्रकर्त्तव्या ‡ सर्व्वासामपि साधकैः ॥ ५२
[गुरुपङ्क्तिं षड़ङ्गञ्च दिक्पालांश्च ततोऽर्च्चयेत् §।]
एवं पूजां पुराकृत्वा मूलेनैव यथाविधि ॥ ५३
नैवेद्यादीन् ¶ यथाशक्त्या दद्याद् देव्यै पुनःपुनः।
ततो वै दशवारांस्तु *दीपं दद्यात्तु † साधकः ॥ ५४

आवरणपूजामाह—कालीं कपालिनीमित्यादि। यन्त्रराजवैन्दवचक्रे मूलदेवता पूजनीया। वैन्दवचक्रस्य दक्षिणे महाकालः पूजयितव्यः। आवरणपूजायान्तु प्रथमावरणे यन्त्रराजस्याष्टदलपद्मस्य अग्नीशाननिर्ऋतिवायुकोणस्थकेशरचतुष्टये अग्निवायुकोणयोर्मध्यपूर्व्वादिगतकेशरे दिक्चतुष्टयगतकेशरचतुष्टये च क्रमेण हृदयादिषड़ङ्गदेवताः पूजयेत्। द्वितीयावरणे—यन्त्रराजस्य मध्यत्रिकोणपृष्ठरेखा-विन्दुचक्रयोरन्तराले गुरुपङ्क्तीः पूजयेत्। तृतीयावरणे—यन्त्रराजस्य प्रथमत्रिकोणसम्मुखत्रिकोणादारभ्य वामावर्त्तेन पञ्चत्रिकोणानां पञ्चदशकोणेषु क्रमेण काल्यादयः पञ्चदश देवताः पूज्याः। चतुर्थावरणे—अष्टदलपद्मस्य पूर्व्वाद्यष्टदलमूलेषु ब्राह्म्याद्यष्ट मातृः पूर्व्वाद्यष्टदलाग्रेषु असिताङ्गाद्यष्टभैरवांश्च प्रादक्षिण्येन पूजयेत्। पञ्चमावरणे—भूपुरस्य पूर्व्वदिग्द्वारमारभ्य प्रादक्षिण्येनाष्टसु दिक्षु इन्द्रेशानयोर्मध्ये निर्ऋतिवरुणयोर्मध्ये च इन्द्राद्यष्टलोकपालान् क्रमेण पूजयेत्। ततो भूपुरवाह्ये इन्द्रादिदशलोकपालानां पृष्ठभागे यन्त्रवहिर्भूतस्थाने प्रादक्षिण्येन वज्राद्यस्त्राणि पूजयेत्। षष्ठावरणे—प्रथमत्रिकोणविन्दुचक्रयोरन्तराले ईशानकोणादारभ्य प्रादक्षिण्येन कोणचतुष्टये मूलदेवताहस्तचतुष्टये वा देवीहस्तचतुष्टयगत-खड्ग-मुण्ड-ाऽभय-वरात्मकास्त्रचतुष्टयं पूजयेत्। मूलेऽनुक्तमपि ग्रन्थान्तरेभ्य आकृष्य क्रमोऽयं लिखितः। पूजायाम् एष एव क्रम अनुसरणीयः, श्यामारहस्यादावुक्तत्वात् शिष्टैः क्रियमाणत्वाच्च। सम्प्रदायभेदेनावरणपूजायां क्वचित् स्थानभेदः क्रमभेदश्च विद्यते। ४६—५३।

---

* सर्व्वासामपि वै देयो वलिः पूजनमेव च। ग। † गन्धं धूपदीपौ क्रमात् तथा। क। गन्धं धूपदीपौ च पानकम्। ख ग। ‡ त्रिस्त्रिः पूजा प्रकर्त्तव्या। घ। § वन्धनीस्थं श्लोकार्द्धं केवलं घ पुस्तके दृश्यते। ¶ नैवेद्यान्तम्। ख। नैवेद्यादि। ग घ। * दशवारन्तु। क ख। † दत्त्वा च। घ।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

पुष्पादिकं पुनर्दद्यान्मूलेनैव यथाविधि ।
ततः सावहितो मन्त्री गुरुं नत्वा शिरःस्थितम् ॥ ५५
देवीं ध्यात्वा चाष्टोत्तरसहस्रं * प्रजपेन्मनुम् ।
तेजोमयं जपफलं देव्या हस्ते † समर्पयेत् ॥ ५६
गुह्यातिगुह्यगोप्त्रीत्वमिति मन्त्रेण मन्त्रवित् ।
ततः शिरसि वै पुष्पं ‡ दत्त्वाष्टाङ्गं प्रणम्य च ॥ ५७ ॥
विसृज्य परया भक्त्या संहारेणैव भक्तितः § ।
उद्धाय्य हृदये देवीं तन्मयो भवति ध्रुवम् ॥ ५८ ॥
पुरश्चरणकालेऽपि पूजा चैषा प्रकीर्त्तिता ।
इति श्रीकालीतन्त्रे सपर्य्याविधिः प्रथमः पटलः * ॥

द्वितीयः पटलः ।

भैरव उवाच—

साधनं सिद्धमन्त्रस्य वक्ष्यामि परमाद्भुतम् ।
भाग्यहीनोऽपि मूर्खोऽपि यद्बोधादमरो भवेत् ॥ १ ॥
साधयेत् सकलान् कामान् सर्व्वसिद्धीश्वरो भवेत् † ।
आदौ पुरस्क्रियां कुर्य्यान्नियमेन यथाविधि ‡ ॥ २ ॥
लक्षमेकं जपेद्विद्यां § हविष्याशी दिवा शुचिः ।
रात्रौ ताम्बूलपूरास्यः ¶ शय्यायां लक्षमानतः ॥ ३ ॥

---

* चाष्टोत्तरशतञ्च प्रजपेन्मनुम् । घ । † तेजोमयं जपजलं । क घ । तेजोमयं जलं देव्या वामहस्ते । ख । ‡ ततो वै शिरसि पुष्पं । क ग घ । § सन्निधापनमुद्रया । क ग घ ।
* सपर्य्यानियमः प्रथमः पटलः । क । सपर्य्यापटलः प्रथमः । ख । † साधयेत् सिद्धिसकलान् साक्षात् सिद्धीश्वरो भवेत् । ख । ‡ समाहितः । घ । § जपेन्मन्त्री । ग घ ।
¶ पूर्णास्यः । ख ।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

नानाचारो न कर्त्तव्यो न चारणमितस्ततः * ।
भूतहिंसा न कर्त्तव्या पशुहिंसा विशेषतः ॥ ४ ॥
बलिदानं विना देव्या हिंसां सर्व्वत्र वर्जयेत् ।
अन्यमन्त्रपुरस्कारं निन्दाञ्चैव विवर्जयेत् † ॥ ५ ॥
ततः सिद्धमनुर्म्मन्त्री प्रयोगार्हो न चान्यथा ।
जीवहीनो यथा देही सर्व्वकर्म्मसु न क्षमः ॥ ६ ॥
पुरश्चरणहीनोऽपि तथा मन्त्रः प्रकीर्त्तितः ।
तस्मादादौ पुरश्चर्य्यां कृत्वा साधकसत्तमः ॥ ७ ॥
प्रयोगञ्च ततः कुर्य्यात् सर्व्वं साधकदुर्लभम् ‡ ।
इति श्रीकालीतन्त्रे पुरश्चरणविधिर्द्वितीयः पटलः § ॥

तृतीयः पटलः ।

भैरव उवाच—

ततो होमविधिं वक्ष्ये सर्व्वसिद्धिप्रदायकम् ।
लतापुष्पान्वितं कृत्वा पर्णानां शतकं सुधीः ॥ १ ॥
तानि सम्मन्त्र्य विधिवद्दशकृत् * साधकोत्तमः ।
ततो वै होमयेत् तानि संस्कृतेऽग्नौ यथाविधि ॥ २ ॥
युगानामयुतं तेन पूजनं जायते शिवे † ।
अनेन क्रमयोगेन यश्चरेद्भुवि साधकः ‡ ॥ ३ ॥

---

* नचाचरणमिष्यते । ग । नचाचारमितस्ततः । घ । † श्लोकार्द्धमेतत् ख ग पुस्तकयोर्नास्ति ।
‡ प्रयोगञ्च सदा कुर्य्यात् सर्व्वविधिविधानतः । क । § पुरश्चरणद्वितीयः पटलः । ख ।

* विधिवदाहुय । ग घ । † जायतेऽचिरात् । ख । दक्षिणा पूजिता भवेत् । ग ।
कालिका पूजिता भवेत् । घ । ‡ भुवि दुर्लभम् । ख । भुवि होमकाम् । ग । भुवि होमतः । घ ।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

gitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalga

न तस्य दुर्लभं किञ्चित् त्रिषु लोकेषु विद्यते ।
धीरो * भवति वाग्मी च सर्व्वसिद्धिमुपालभेत् ॥ ४ ॥
हुनेदाज्येन भक्तेन मांसेन रुधिरेण च ।
कृष्णपुष्पेण साज्येन सरक्तेन विशेषतः ॥ ५ ॥
आमिषादिभिरप्येवं श्मशाने जुहुयात् सुधीः ।
महाकालं हुनेद्यत्नात् पश्चाद्देवीं विशेषतः † ॥ ६ ॥
त्रिधा विभज्य विद्यां वै साधकः शुद्धमानसः ‡ ।
मांसं रक्तं त्वचं § केशं नखं भक्तञ्च ¶ पायसम् ॥ ७ ॥
आज्यञ्चैव * विशेषेण जुहुयात् सर्व्वसिद्धये ।
एवं कृते तु सर्व्वत्र लभते सिद्धिमुत्तमाम् ॥ ८ ॥
यद्यत् कामयते कामी † तत्तदाप्नोति निश्चितम् ।
देववन्मानदो भूत्वा भुनक्ति बहुलं सुखम् ॥ ९ ॥
तर्पणस्य विधिं वक्ष्ये येन कार्य्याणि साधयेत् ।
तर्पयेच्च पयोभिश्च रक्तधारायुतैस्तथा ॥ १० ॥
मज्जाभिश्च ‡ तथा ल्हृत् स्वकीयेन परेण च § ।
आकर्षितायाः कन्यायाः कुलप्रक्षालनेन च ॥ ११ ॥
मेषमाहिषरक्तेन नररक्तेन चैवहि ।
मूषमार्जाररक्तेन तर्पयेद्देवतां पराम् ॥ १२ ॥
एवं तर्पणमात्रेण साक्षात् सिद्धेश्वरो भवेत् ।
कविता जायते तस्य द्राक्षारसपरम्परा ॥ १३ ॥
बृहस्पतिसमो भूत्वा देववद्भुवि मोदते ।
न तस्य पापपुण्यानि जीवन्मुक्तो भवेद्ध्रुवम् ॥ १४ ॥
इति श्रीकालीतन्त्रे नैमित्तिकविधिस्तृतीयः पटलः ।

---

* मूको । क । † प्रयत्नतः । क । प्रपूजयेत् । ख । ‡ सिद्धमानसः । ग । § तिलं । क । ¶ भोज्यञ्च । घ । * साज्यचैव । ख । † कामं । ख ग । ‡ रेतोभिश्च । ख ग । § । कचेन च । ख घ । करेण च । ग ।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

चतुर्थः पटलः ।

भैरव उवाच—

अथ काम्यविधिं वक्ष्ये येन सर्व्वत्र सर्व्वगः ।
साधकः साधयेत् सिद्धिं देवानामपि दुर्लभाम् * ॥ १
कुलागारं पुष्पिताया दृष्ट्वा यो जपते नरः ।
अयुतैकप्रमाणेन साधकः स्थिरमानसः ॥ २ ॥
केवलं शुद्धभावेन स तु विद्यानिधिर्भवेत् ।
संस्कृताः प्राकृताः शब्दा लौकिका वैदिकाश्च ये † ॥ ३
वशमायान्ति ते सर्व्वे साधकस्य च नान्यथा ।
अथवा मुक्तकेशश्च हविष्याशी सुसंयतः ‡ ॥ ४ ॥
प्रजपेदयुतं प्राज्ञ एतदेव फलं लभेत् § ।
नग्नां परस्त्रियं पश्यन्नयुतं यस्तु साधकः ॥ ५ ॥
प्रजपेत् स भवेत् सद्यो विद्याया वल्लभः स्वयम् ।
तस्य दर्शनमात्रेण वादिनः कुण्ठतां गताः ¶ ॥ ६
गद्यपद्यमयी वाणी तस्य वक्त्रात् प्रवर्त्तते * ।
तत्पदे † सुधियः सर्व्वे प्रणमन्ति मुदान्विताः ॥ ७
तस्य वीक्ष्य ‡ परिचयाज्जड़ा भवन्ति वाग्मिनः § ।
[अथवा मुक्तकेशश्च हविष्यं भक्षयेन्नरः ॥ ८
प्रजपेदयुतं तस्य एष प्रतिनिधिः स्मृतः ¶ ।]
धनकामस्तु यो विद्वान् महदैश्वर्य्यकामुकः ॥ ९

---

* सर्व्वं देवानामपि दुर्लभम् । ख ग । † वैदिका अपि । क । वैदिकास्तथा । ख । ‡ हविष्यं भक्षयेन्नरः । ख ग । § प्रजप्य चायुतं प्राज्ञस्तदेव हि फलं लभेत् । ख घ । ¶ निष्प्रभा मताः । क । * प्रजायते । क । † तन्नाम्ना । घ । ‡ काव्य । घ । § जड़ो भवति वाल्मीकः । क । ¶ एतत्श्लोकार्द्धद्वयं कपुस्तके नास्ति ।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

बृहस्पतिसमो यस्तु भवितुं कामयेन्नरः * ।
अष्टोत्तरशतं जप्त्वा कुलस्त्रीमन्त्र मन्त्रवित् † ॥ १०
मैथुनं यः प्रयात्येव ‡ स तु सर्व्वफलं लभेत् ।
लतारतेषु जप्तव्यं महापातकमुक्तये ॥ ११
लता यदि न लभ्येत तदा सज्जां $ प्रयत्नतः ।
समुत्साथ्य जपेन्मन्त्री सर्व्वं ¶ कामार्थसिद्धये ॥ १२
तासां प्रहारं निन्दाञ्च कौटिल्यमप्रियन्तथा ।
सर्व्वथा च न कर्त्तव्यमन्यथा सिद्धिरोधकृत् ॥ १३
स्त्रियो देवाः स्त्रियः प्राणाः स्त्रिय एव विभूषणम् *
स्त्रीसङ्गिना सदा भाव्यमन्यथा स्वस्त्रियामपि † ॥१४
विपरीतरता सा तु भाविता ‡ हृदयोपरि ।
[अष्टोत्तरशतं जप्त्वा नासाध्यं विद्यते क्वचित् §] ॥१५
तदस्यावचितं पुष्पं तदस्यावचितं जलम् ।
तदस्यावचितं भोज्यं देवताभ्यो निवेदयेत् ॥ १६
महाचीनद्रुमलतावेष्टितः साधकोत्तमः ।
रात्रौ यदि जपेन्मन्त्रं ¶ सैव कल्पलता भवेत् ॥ १७
महाचीनद्रुमलतावेष्टनेन च यत् फलम् ।
तस्यापि षोड़शांशेन कलां नार्हन्ति ते शवाः ॥ १८
शवासनाधिकफलं लतागेहप्रवेशनम् ।
श्मशानालयमागत्य मुक्तकेशो दिगम्बरः ॥ १९

---

* कामयते स्वयम् । क । बृहस्पतिसमो भूत्वा कवित्वं कारयेत्तथा । ख । † यवतः । ग घ । ‡ करोत्येषः । ख । प्रयात्येषः । क । $ लता यदि न सङ्गच्छेत्तदा शुक्रम् । ख । लता यदि संसर्गस्तदा शुक्रम् । ग घ । ¶ धर्म्म । ख । ततो जप्यं सर्व्वं । ग । * स्त्रियो देव्यः स्त्रियः पूज्याः स्त्रिय एव हि भूषणम् । ख । † स्वस्त्रिया अपि । क । ‡ विपरीतरतासक्ता भविता । ख । विपरीतरता सक्ता भाविता । ग । § श्लोकार्द्धमेतत् केवलं खपुस्तके दृश्यते । ¶ मन्त्री । घ ।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

जपेदयुतसंख्यन्तु सर्व्वकामार्थसिद्धये।
महाचीनद्रुमलताम्भ्राभिर्व्विल्वपत्रकम् * ॥ २०
सहस्रं देवीमभ्यर्च्य श्मशाने साधकोत्तमः।
तदा राज्यमवाप्नोति † यदि सा न पलायते ॥ २१
स्वगात्ररुधिराक्तैश्च विल्वपत्रैः सहस्रशः।
श्मशानेऽभ्यर्च्य कालीन्तु ‡ वागीशसमतां व्रजेत् ॥ २२
अनादिकां तथा § दृष्ट्वा लिङ्गं जपति भूमिपः।
निर्म्मलाञ्च ¶ तथा दृष्ट्वा वश्यार्थञ्चायुतं जपेत् ॥ २३

इति श्रीकालीतन्त्रे कामनाविधिश्चतुर्थः पटलः।

पञ्चमः पटलः।

भैरव उवाच—

अथातः संप्रवक्ष्यामि मन्त्रं कल्पद्रुमं परम्।
येन जप्तेन विधिवत् सिद्धयोऽष्टौ भवन्ति हि ॥ १
यस्याः स्मरणमात्रेण वाचसितायते * नृणाम्।
यज्ज्ञाना † दमरत्वञ्च लभेन्मुक्तिं चतुर्व्विधाम् ॥ २
ये जपन्ति परां देवीं नियमेन तु संस्थिताः ‡।
देवाः सर्व्वे नमस्यन्ति किं पुनर्म्मानवादयः ॥ ३
वृहस्पतिसमो वाग्मी धने धनपतिर्भवेत्।
कामतुल्यश्च नारीणां रिपूणां शमनोपमः § ॥ ४

---

* पत्रकैः। क। † तदा तु राज्यमाप्नोति। ग। ‡ देवीञ्च। ग। § मूलविद्यां लतां। ख। अनादितां तथा। ग। अनुदितां यथा। घ। ¶ विमलाञ्च। ग घ।

* मुक्तिस्तु जायते। क। † यजना। ग। ‡ नियमेन शुचे स्थिताम्। ख। सदा देवीं नियमेन नरस्थिताः। ग। नियमेन नराः स्थिताः। घ। § रिपूणाममलोपमः। ख। रिपुणाञ्च यमोपमः। ग घ।

५

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

तस्य पादाम्बुजद्वन्द्वं राज्ञां किरीटभूषणम् * ।
तस्य भूतिं विलोक्यैव कुवेरोऽपि तिरस्कृतः ॥ ५

य एनां पूजयेद्देवीं नियमे † पितृकानने ।
तस्य चाज्ञाकराः ‡ सर्व्वे सिद्धयोऽष्टौ भवन्ति हि ॥ ६

तस्यैव जननी धन्या पिता तस्य सुरोपमः § ।
सम्प्रदायविदां वक्ता य एनां वेत्ति तत्त्वतः ॥ ७

अस्या विज्ञानमात्रेण कुलकोटीः समुद्धरेत् ।
नर्द्दन्ति पितरः सर्व्वे गाथां गायन्ति ते मुदा ¶ ॥ ८

अपि नः स्वकुले कश्चित् कुलज्ञानी भविष्यति ।
स धन्यः स च विज्ञानी स कविः स च पण्डितः ॥ ९

स कुलीनः स सुकृती स वशी स च साधकः * ।
स ब्राह्मणः स वेदज्ञः सोऽग्निहोत्री स दीक्षितः ॥ १०

स तीर्थसेवी पीठानां स निवासी स सर्व्वदः ।
[स सोमपायी स व्रती स यज्वा स च साधकः † ॥ ११

स सन्न्यासी च योगी च स मुक्तः स च ब्रह्मवित् ‡ ।]
स वैष्णवः स शैवश्च स सौरः स च गाणपः ॥ १२

स च विज्ञानवेत्ता च य एनां वेत्ति तत्त्वतः ।
तस्मात् सर्व्वप्रयत्नेन सर्व्वावस्थासु सर्व्वदा ॥ १३

---

* मुकुटभूषणम् । ग । † य एनान्तु यजेद्देवीं नियमी । ख । य एनां चिन्तयेद्देवीं नियतः । ग । य एनां चिन्तयेन्मन्त्री नियतः । घ । ‡ तस्य चाज्ञाकराः । ग घ । § तातस्तस्य शिवोपमः । घ । ¶ सर्व्वदा । ख । * सर्व्वदीक्षितः । ग । स च भूमिपः । घ । † स व्रती सोमपायी स स यज्वा स च दीक्षितः । ख । ‡ कपुस्तके वन्धनीस्थश्लोकार्द्धद्वयस्थले "स सोमपायी सन्न्यासी स योगी स च ब्रह्मवित्" इति श्लोकार्द्धं दृश्यते ।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

एनां ज्ञात्वा यजेन्मन्त्री * सुखमोक्षफलप्रदाम् † ।
[नमः पाशाङ्कुशे द्वेधा फट् स्वाहा कालि कालिके ॥१४
दीर्घतनुच्छदः कालीमनुः पञ्चदशाक्षरः ।
अनया सदृशी विद्या त्रैलोक्ये नापि विद्यते ‡] ॥१५
विद्याराज्ञं प्रवक्ष्यामि श्रुत्वा कर्णावतंसवत् § ।
मायाद्वयं कूर्चयुग्ममैन्द्रान्तं मादनत्रयम् ¶ ॥ १६
मायाविन्द्वीश्वरयुतं दक्षिणे कालिकेपदम् ।
संहारक्रमयोगेन बीजसप्तकमुद्धरेत् ॥ १७
एकविंशत्यक्षराद्यस्ताराद्यः * कालिकामनुः ।
पूर्वोक्तमन्त्रवत् कुर्य्यात् पूजां सर्व्वां विचक्षणः ॥१८

इति श्रीकालीतन्त्रे त्रिपुविद्याविधिः पञ्चमः पटलः ।

मन्त्रान्तरमाह नम इति। नमः इति स्वरूपम्। पाशाङ्कुशे द्वेधा—पाशः आं, अङ्कुशः क्रों इत्येतौ द्वेधा। फट् स्वाहा कालि कालिके—इति स्वरूपम्। दीर्घतनुच्छदः—हूं। एतेन नमः आं आं क्रों क्रों फट् स्वाहा कालि कालिके हूं इति पञ्चदशाक्षरः कालीमन्त्र आयातः। १४, १५।

मन्त्रान्तरमाह विद्याराज्ञमित्यादि। "श्रुत्वा कर्णावतंसवत्" इत्यत्र तन्त्रसारधृतकालीतन्त्रवचने "शृणुष्व कमलानने" इति पाठो दृश्यते। मायाद्वयं—ह्रीं ह्रीं। कूर्चयुग्मं—हूं हूं। ऐन्द्रान्तं मादनत्रयं, मायाविन्द्वीश्वरयुतं—इन्द्रस्य लकारस्य समीपं ऐन्द्रं रेफः तत् अन्ते यस्य तादृक्; माया ईकारः, विन्दुः, ईश्वरी नादः, एतैर्युतं; मादनः ककारः तस्य त्रयं; तेन क्रीं क्रीं क्रीं इत्यायातम्। दक्षिणे कालिके इति स्वरूपम्। तत्पश्चात् उक्तबीजसप्तकं संहारक्रमयोगेन विलोमेन उद्धरेत्। ताराद्यः—तारः प्रणवः आद्यो यस्य तादृशः। एतेन ओं ह्रीं ह्रीं हूं हूं क्रीं क्रीं क्रीं दक्षिणे कालिके क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं इत्येकविंशत्यक्षराढ्यः कालिकामनुर्भवेत्। मन्त्रोऽयं विद्यासु राजमिव इति विद्याराज्ञम्। पूर्वोक्तमन्त्रवत् द्वाविंशत्यक्षरमन्त्रवत्। अस्यापि मन्त्रस्य ध्यानपूजादिकं कुर्य्यात्। १६—१८।

---

* नृपेन्मन्त्री। क। † महाव्ययाम्। ख। महाफलम्। घ। ‡ बन्धनीस्थः सार्द्धश्लोकः केवलं "ग" पुस्तके विद्यते। § श्रोतुः कर्णावतंसकाम्। ख। ¶ मदनत्रयम्। ख। ढाः प्रोक्तोऽयं। ग, घ।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

षष्ठः पटलः ।

भैरव उवाच—

शृणु देवि वरारोहे वीरसाधनमुत्तमम् ।
नृणां शीघ्रफलावाप्तेः प्रकारान्तरमुच्यते ॥ १
चतुष्पथे चतुर्द्दिक्षु पुरुषं हृदयं खनेत् ।
जीवितं ब्रह्मरन्ध्रे वै दीपान् प्रज्वालयेत् सुधीः * ॥२
मध्ये तथा खनेदेकं तत्र मुण्डासनं भवेत् † ।
पूर्व्वोक्तेन च मार्गेण तत्र संस्कारमाचरेत् ‡ ॥ ३
महाकालादिदेवेभ्यो बलिं पूर्व्ववदाहरेत् ।
कल्पोक्तपूजां सम्पूज्य जपेत् प्रयतमानसः § ॥ ४
दन्ताक्षमालया चैव राजदन्तेन मेरुणा ।
दिग्वासाः प्रजपेन्मन्त्रमयुतं सर्व्वदैवतम् ॥ ५
जपान्ते च बलिं दत्त्वा दक्षिणां विभवावधि ।
सर्व्वसिद्धीश्वरो विद्वान् सर्व्वदेवनमस्कृतः ॥ ६
अथवा विजनेऽरण्ये स्थिरयोगासनो ¶ नरः ।
उदयास्तं दिवा जप्त्वा सर्व्वसिद्धीश्वरो भवेत् ॥ ७
बिल्ववृक्षे निजक्रोड़े शवमारोप्य यत्नतः ।
नृसिंहमुद्रया वीक्ष्य जपेन्मातृकया नरः ॥ ८
सहस्रं तत्र जप्त्वा वै सर्व्वसिद्धीश्वरो भवेत् ।
वटमूले शवं नीत्वा तत्र देवीं प्रपूज्य च ॥ ९

* ज्वलेद्दिति । क ग । ज्वलेद्दिशि । ख । † तथा वृहदासनं स्मरेत् । ख । तत्र मुण्डासनं भवेत् । ग घ । ‡ मारभेत् । घ । § जपेन्नियतमानसः । घ । ¶ स्थिरशय्यासनो । क । स्थिरशय्यासनो । ग घ ।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

सुप्त्वा * तत्र मनुं जप्त्वा सर्व्वसिद्धीश्वरो भवेत् ।
करकाञ्चीं समादाय मुण्डमालाविभूषितः ॥ १०
तेनैव तिलकं कृत्वा † तत्तद्भस्मविभूषितः ।
श्मशाने च सकृज्जप्त्वा सर्व्वसिद्धीश्वरो भवेत् ॥ ११
कुङ्कुमागुरुकस्तूरीरोचनागुरुचन्दनम् ।
कर्पूरं पद्मरागञ्च केशरं हरिचन्दनम् ‡ ॥ १२
एकत्र साधितं कृत्वा प्रत्येकं साधयेत्ततः § ।
एतत्तिलकमात्रेण राजानं वशमानयेत् ¶ ॥ १३
जिह्वाग्रे रुधिरं कृत्वा * आकाशीञ्च समाहरेत् ।
तेनैव गुटिकां † कृत्वा भद्रकालीं ततो ‡ जपेत् ॥ १४
नीलां नीलपताकाञ्च ललज्जिह्वां करालिकाम् § ।
ललाटतिलकं कृत्वा साधको वीतभीः स्वयम् ॥ १५
महाष्टमी-नवम्योस्तु संयोगे पुरतः स्थितः ।
छागमहिषमेषाणां चतुर्दिक्षु शरान् क्षिपेत् ॥ १६
कबन्धान् मुण्डपुञ्जञ्च ¶ दीपादिभिरलङ्कृतम् * ।
मध्ये कबन्धमास्तीर्य्य तत्र गन्धर्व्वरूपधृक् ॥ १७
ताम्बूलपूरितास्यमञ्जनाञ्चितलोचनम् ।
कृत्वा कालीमनुं † जप्त्वा सर्व्वसिद्धीश्वरो भवेत् ॥ १८
वियद्वह्नियुतं देवि नेत्रान्तं चन्द्रभूषितम् ।
वीजं प्रत्येकद्रव्याणां मिलितानाञ्च पार्व्वति ॥ १९

---

* स्थित्वा । ग । † जिह्वाग्रे रुधिरं कृत्वा । क । ‡ श्लोकार्द्धमेतत् केवलं गपुस्तके विद्यते । § साधयेत् सुधीः । ख घ । ¶ श्लोकार्द्धमेतत् केवलं गपुस्तके विद्यते । * वीर । ख ग घ । † वटिकां । ग घ । ‡ तत्र कालीमनुं जपेत् । घ । § करालिनीम् । क । ¶ कबन्धमुण्डपुञ्जञ्च । ख । कबन्धान् मुन्डपुञ्जादीन् । ग घ । * कृतः । क । कृतान् । ग घ । † तत्र मनुं । ग घ ।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

मूलमन्त्रेण मन्त्रं यो * जपेत् साष्टशतत्रयम् †।
जिह्वाग्रे रुधिरं गृह्ण चामुण्डे घोरनिस्वने ॥ २०
बलिं गृह्ण वरं देहि रुधिरं गगनेऽमले।
कालि कालि प्रचण्डोग्रे ततोऽस्त्रं ‡ कवचं ततः ॥२१
कालिकेयं समाख्याता वीराणां हितकाम्यया।
कूर्च्चयुग्मं महादेवि नीलायाः कथितं तव ॥ २२
वियद्भृगुयुतं देवि कीलमिश्रं रवौ रतिः।
चन्द्रखण्डसमायुक्तं ततो नीलपदं ततः ॥ २३
पताके ह्र फडन्ते § स्यात् पूर्व्वंकूटमनुर्म्मतः ¶।
सुगुप्तेयं महाविद्या तव स्नेहादिहोदिता * ॥ २४
जयश्रीकरणी † देवी पताकेव ‡ रणस्थले।
तेन नीलपताकेयं विद्या वै वीरसाधने § ॥ २५
उग्रचण्डा महाविद्या या पुरा कथिता प्रिये।
ललज्जिह्वा तु सा प्रोक्ता योज्या वै वीरसाधने ¶ ॥ २६
यासौ विद्या * महातारा सा करालेति कीर्त्तिता।
भूमिपुत्रसमायुक्ता यामावास्या शुभोदया † ॥ २७
भाद्रे पुष्यर्क्षयोगेन ‡ तस्यां वीरवरोत्तमः।
विष्णुक्रान्तां समानीय निक्षिपेन्मृतभूमिषु ॥ २८
तत्र तां साधितां ज्ञात्वा तद्दिने मत्स्यहट्टके §।
तत्र तं साधितं ¶ मत्स्यमेकमूल्येन दापयेत् ॥ २९

* मन्त्रज्ञो। ख ग घ। † सार्द्धं शतद्वयं। ख ग। ° सार्द्धशतत्रयम्। घ। ‡ ततः फट्। ग। § ह्रं फडन्तं। क। ¶ पूर्व्वं कूर्च्चं। ग घ। * न्मयोदिता। ग। † करिणी। क। ‡ पताकेयं। क। § योज्या वै नीलसाधने। ख ग घ। ¶ नीलसाधने। ग घ। ललज्जिह्वा मयोक्ता वै संयोज्या नीलसाधने। ख। * आदिविद्या। ख। या सा विद्या। ग घ। † शुभप्रदा। क। ‡ पुष्कारयोगेन। ग। पुष्यर्च्चयोगेन। घ। § मृतहट्टके। क घ। मृतसूतक। ग। ¶ तत्र प्रसारितं। ख ग घ।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

तज्जलेनाभिषेकञ्च पूर्व्ववच्च शिरोपरि * ।
साधितां विजयां तस्य उदरे मुखवर्त्मना ॥ ३०
क्षिप्त्वा तत्र खनेन्मत्स्यमञ्जनाञ्चितलोचनः ।
पूर्व्वद्रव्येण तिलकमुत्थाय च † मनुं जपेत् ॥ ३१
स्वयं वै तत्र ‡ भगवान् भैरवो लगुड़ान्वितः ।
गतभीतिस्ततो वीरस्तं विलोक्य जपेन्मनुम् ॥ ३२
यदि भाग्यवशाद्देवि लगुड़स्तत्र लभ्यते ।
तदा स्वयं भैरवोऽसौ स्वयं वीरेश्वरो भवेत् ॥ ३३
मत्स्यमानीय देवेशि निक्षिपेत् पितृकानने ।
तत्रासक्तज्जपित्वा तु देवतामिलनं भवेत् § ॥ ३४
तत्र नत्वा महादेवं महादेवीञ्च भाविनि ¶ ।
तद्भस्मतिलकं कृत्वा स्वयं वीरेश्वरो भवेत् ॥ ३५
निशायां मृतहट्टे च उन्मत्तानन्दभैरवः ।
दिग्वासा विमलो भस्मभूषणो मुक्तकेशकः ॥ ३६
कपाली खड्गहस्तश्च जपेन्मात्रक्रया यदि ।
तदा तस्य महादेवि सर्व्वसिद्धिः करे स्थिता * ॥ ३७
डाकिनीं योगिनीं वापि अन्यं वा भूतलाङ्गनाम् ।
तत्राप्यानीय † संपूज्य सर्व्वसिद्धीश्वरो भवेत् ॥ ३८
सर्व्वेषां जीवहीनानां जन्तूनां वीरसाधने ‡ ।
ब्राह्मणं गोमयं त्यक्त्वा § साधयेद्वीरसाधनम् ॥ ३९
मृतासनं विना देवि पूजयेत् पार्व्वतीं शिवाम् ।
तावत्कालं वसेद्घोरे यावदाहृतसंप्लवम् ॥ ४०

---

* शवोपरि । ख ग घ । † तिलकं पूर्व्वद्रव्येण उत्थाय च । ख ग । तिलकी सर्व्वद्रव्येण उत्थाय च । घ । ‡ स्वयमायाति । ख । § तत्र सकृज्जपित्वा तु देवतामिव लङ्घयेत् । ग । ¶ भामिनि । घ । * प्रजायते । ग । † तत आनीय । घ । ‡ नीलसाधने । ग घ । § गोमये कृत्वा । ग ।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalga

महाशवाः प्रशस्ताः सुरः प्रधानवीरसाधने * ।
क्षुद्राः प्रयोगकर्त्तॄणां प्रशस्ताः सर्व्वसिद्धिदाः ॥ ४१
एवं वीरक्रमं † देवि कथितञ्च तवानघे ।
न कस्यचित् प्रवक्तव्यं ‡ मम प्रीत्या § महेश्वरि ॥ ४२

इति श्रीकालीतन्त्रे वीरसाधने गुप्तपटले षष्ठः पटलः ¶ ॥

सप्तमः पटलः ।

देव्युवाच—
ज्ञातमेतन्मया देव * त्वत्प्रसादान्महेश्वर † ।
श्मशानान्तु मे देव पुरश्चरणमुत्थिताम् ॥ १
[सिद्धन्ते च यथा मन्त्रा लभन्ते सिद्धिमुत्तमाम्] ‡
भैरव उवाच— §
श्मशाने च पुरश्चर्य्या कथिता भुवि ¶ दुर्लभा ।
अथवान्यप्रकारेण पुरश्चरणमिष्यते * ॥ २
कुजे वा शनिवारे वा नरमुण्डं समाहृतम् ।
पञ्चगव्येन मिलितं चन्दनाद्यैर्विशेषतः ॥ ३
निक्षिप्य भूमौ हस्तार्द्धमानतः कानने वने ।
तत्र तद्दिवसे रात्रौ सहस्रं यदि मानवः ॥ ४
एकाकी प्रजपेन्मन्त्रं स भवेत् कल्पपादपः ।
अथवान्यप्रकारेण पुरश्चरणमिष्यते † ॥ ५

---

* कालिकावीर । ग घ । † नीलक्रमं । ख ग घ । ‡ प्रयोक्तव्यं । क । § तत्र प्रीत्या । ग । ¶ इति वीरसाधनः सपर्य्यापटलः । ख । इति श्रीकालीतन्त्रे वीरसाधने षष्ठः पटलः । ग । इति श्रीकालीतन्त्रे वीरसाधनविधौ गुप्तः षष्ठः पटलः । घ ।

* ज्ञानमेतन्महादेव । क । ज्ञातमेतन्महादेव । ग । † श्लोकार्द्धमेतत् ख पुस्तके नास्ति । ‡ श्लोकार्द्धमेतत् केवलं ख पुस्तके विद्यते । § भगवानुवाच । ख । ¶ देवि । ग घ । * सुच्यते । ग घ । † सुच्यते । ग घ ।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

शवमानीय तद्द्वारि तेनैव परिखन्यते * ।
तद्दिनात्तद्दिनं यावत्तावदष्टोत्तरं शतम् ॥ ६
स भवेत् सर्व्वसिद्धीशो नात्र कार्य्या विचारणा ।
अथवान्यप्रकारेण पुरश्चरणमुच्यते ॥ ७
अष्टम्याञ्च चतुर्द्दश्यां पक्षयोरुभयोरपि ।
सूर्य्योदयात् समारभ्य यावत् सूर्य्योदयान्तरम् ॥ ८
तावज्जप्त्वा निरातङ्कः सर्व्वसिद्धीश्वरो भवेत् ।
अथवान्यप्रकारेण पुरश्चरणमिष्यते ॥ ९
चन्द्रसूर्य्यग्रहे चैव † ग्रासावधि विमुक्तितः ।
यावत्संख्यं मन्त्रं जप्त्वा ‡ तावद्धोमादिकञ्चरेत् ॥ १०
सूर्य्यग्रहणकालाद्धि नान्यः कालः प्रशस्यते § ।
तत्र यद् यत् कृतं कर्म्म तदनन्तफलं लभेत् ¶ ॥ ११
अथवान्यप्रकारेण पुरश्चरणमिष्यते ।
शरत्काले चतुर्थ्यादि नवम्यन्तं विशेषतः ॥ १२
भक्तितः पूजयित्वा तु रात्रौ तावत् सहस्रकम् ।
जपेदेकाकी * विजने केवलं तिमिरालये ॥ १३
अष्टम्यादिनवम्यन्तमुपवासपरो भवेत् ।
अन्यत्र गुरुमार्गस्य लङ्घनं नैव कारयेत् ॥ १४
अथवान्यप्रकारेण पुरश्चरणमिष्यते † ।
अष्टमीसन्धिवेलायामष्टोत्तरलताष्टकम् ॥ १५
प्रविश्य मन्त्री विधिवत्ताः समभ्यर्च्य यत्नतः ।
पूर्व्वोक्तकल्पमासाद्य पूजादिकं समाचरेत् ॥ १६

---

* परिखन्य च । ख ।　† चन्द्रसूर्य्योपरागे च । ख ।　‡ जप्त्वा ताव । ख घ । यावत्संख्यं जपेन्मन्त्रं ताव । ग ।　§ कालो विशिष्यते । ग ।　¶ तत्र यद् यत्कृतं सर्व्वमनन्तफलदं भवेत् । ख । अत यद् यत कृतं कर्म्म तदानन्ताय कल्पते । ग ।　* देकस्तु । क ।　† मुच्यते । ग घ ।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

gitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalga

केवलं कामदेवोऽसौ जपेदष्टोत्तरं शतम् ।
तासान्तु पत्रमूलेषु उल्कां (?) संगृह्य मस्तके * ॥ १७
मन्त्रसिद्धिर्भवेत् सद्यो † लतादर्शनपूजनात् ।
अथवान्यप्रकारेण पुरश्चरणमुच्यते ‡ ॥ १८
आकृष्टायाः कुलागारे लिखित्वा § मन्त्रमेव च ।
सम्पूज्य ¶ तत संस्कारं कृत्वा तस्यै निवेद्य च * ॥ १९
किञ्चिज्जप्त्वा मनुं नोत्थः देवताभावतत्परः ।
तां विसृज्य नमस्कृत्य स्वयं जप्त्वा सुसंयतः ॥ २०
प्रातः स्त्रीभ्यो वह्निं दत्त्वा मन्त्रसिद्धिर्न संशयः ।
अथवान्यप्रकारेण पुरश्चरणमिष्यते ॥ २१
गुरुमानीय संस्थाप्य देववत् पूजनं विभोः ।
वस्त्रालङ्कारहेमाद्यैः सन्तोष्य गुरुमेव च ॥ २२
तत्सुतं तत्सुताश्चैव तत्पत्नीश्च विशेषतः † ।
पूजयित्वा मनुं जप्त्वा स्वयं सिद्धीश्वरो भवेत् ॥ २३
अथवान्यप्रकारेण पुरश्चरणमिष्यते ।
सहस्रारे गुरोः पादपद्मं ध्यात्वा प्रपूज्य च ॥ २४
केवलं देवभावेन जप्त्वा सिद्धीश्वरो भवेत् ।
गुरवे दक्षिणां दद्यात् ‡ यथाविभवमात्मनः ॥ २५
गुरोरनुज्ञामात्रेण दुष्टमन्त्रोऽपि सिद्ध्यति ।
गुरुं विलङ्घ्य शास्त्रेऽस्मिन्नाधिकारः सुरैरपि ॥ २६
एषाञ्च मन्त्रतन्त्राणां प्रयोगः क्रियते यदि ।
गुरुतत्त्वं विना देवि सिद्धिहानिः § प्रजायते ॥ २७

---

* तासान्तु पदमूलेन टक्का संगृह्य कर्णके । ख । तासान्तु पादमूलेन उग्रां सम्पूज्य बवतः । ग घ । † तस्य । घ । ‡ श्लोकार्द्धमेतत् कपुस्तके नास्ति । § फन्ताः कतिलतागारे लिखित्वा । ख । भावयेत् । ग घ । ¶ प्रपूज्य । ख ग । * निवेदयेत् । ग । † तथैव च । ख । ‡ दत्त्वा । ग । § नैव सिद्धिः । ख ।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

[अथवान्यप्रकारेण पुरश्चरणमिष्यते ।
स्वकीयां परकीयां वा स्त्रियमानीय साधकः ॥ २८
शतमष्टोत्तरं जप्त्वा योनिमामन्त्र्य तत्त्ववित् ।
गच्छन् परमतत्त्वज्ञः सहस्रं जपते यदि ॥ २९
तदा मन्त्रो भवेत् सिद्धो दुष्टमन्त्रोऽपि पार्व्वति ।
एतत्प्रयोगं देवेशि न कस्मै दर्शयेत् क्वचित् *] ॥ ३०
एतन्मन्त्रञ्च तन्त्रञ्च शिष्येभ्योऽपि न दर्शयेत् ।
[यदि वा दर्शयेन्मोहात् कुबुद्धिः कुलनाशकः † ॥] ३१
अन्यथा प्रेतराजस्य भवनं याति निश्चितम् ‡ ।

इति श्रीकालीतन्त्रे रहस्यपुरश्चरणविधिः सप्तमः पटलः ।

अष्टमः पटलः ।

भैरव उवाच—

अथाचारं प्रवक्ष्यामि यत्कृते*ऽमृतमश्नुते ।
सर्व्वभूतहिते युक्तः समयाचारपालकः ॥ १
अनित्यकर्म्मसन्त्यागी नित्यानुष्ठानतत्परः ।
मन्त्राराधनमात्रेण शिवभावेन † तत्परः ॥ २
परस्यां देवतायाञ्च सर्व्वकर्म्मनिवेदकः ।
अन्यमन्त्रार्च्चनश्रद्धामन्यमन्त्रप्रपूजनम् ॥ ३
कुल-स्त्री-वीरनिन्दाञ्च तद्द्रव्यस्यापहारणम् ।
स्त्रीषु रोषं प्रहारञ्च वर्जयेन्मतिमान् सदा ॥ ४

---

* बन्धनीस्थं श्लोकत्रयं केवलं गपुस्तके विद्यते । † बन्धनीस्थं श्लोकार्द्धं केवलं गपुस्तके ।
‡ तस्य जायते । क ।
* कृत्वा । ग । † भावन । घ ।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

gitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalga

स्त्रीमयञ्च जगत्सर्व्वं स्वयं तावत् * तथा भवेत् ।
पेयं चर्व्व्यं तथा चोष्यं भक्ष्यं भोज्यं गृहं स्वयम् † ॥ ५
सर्व्वञ्च युवतीरूपं भावयेन्मतिमान् सदा ‡ ।
कुलजां युवतीं वीक्ष्य नमस्कुर्य्यात् समाहितः § ॥ ६
यदि भाग्यवशेनैव कुलदृष्टिस्तु जायते ¶ ।
तदैव मानसीं पूजां तत्र तासां प्रकल्पयेत् ॥ ७
बालां वा यौवनोन्मत्तां वृद्धां वा युवतीमपि ।
कुत्सितां वा महादुष्टां * नमस्कृत्य विभावयेत् ॥ ८
तासां प्रहारं निन्दाञ्च कौटिल्यमपि वर्जयेत् † ।
सर्व्वथा नैव कर्त्तव्यमन्यथा सिद्धिरोधकृत् ॥ ९
स्त्रियो देवाः स्त्रियः प्राणाः स्त्रिय एव विभूषणम् ।
स्त्रीसङ्गिना सदा भाव्यमन्यथा स्वस्त्रिया अपि ‡ ॥ १०
विपरीतरता सा तु § भविता हृदयोपरि ।
[तद्धस्तावचितं पुष्पं तद्धस्तावचितं जलम् ¶ ॥ ११
तद्धस्तावचितं भोज्यं देवताभ्यो निवेदयेत् ।
सर्व्वं तदक्षयं प्रोक्तं देवतापूजनात् प्रिये ॥ १२
विपरीतरतासक्तोऽप्यष्टोत्तरसहस्रकम् ।
अष्टोत्तरशतं वापि तदा सिद्धिः प्रजायते *-] ॥ १३
स्त्रीद्वेषो नैव कर्त्तव्यो विशेषात् पूजनं स्त्रियाः † ।
जपस्थाने महाशङ्खं निवेश्योर्द्ध्वं जपञ्चरेत् ॥ १४
स्त्रियं पश्यन् स्पृशन् गच्छन् विशेषात् कुलजां शुभाम् ‡ ।

---

* स्वयञ्चैव । ग । † सुखं । ग । शुभं । घ । ‡ स्वयञ्च युवतीरूपं भावयेद्यतमानसः । ख । § सुसंयतः । ग । ¶ दृष्टिः प्रजायते । ग । * महानष्टां । ख । तथा दुष्टां । ग घ । † मप्रियन्तथा । ख ग घ । ‡ स्वस्त्रियामपि । ख ग । § विपरीतरतासक्ता । ख ग । ¶ पयः । घ । * बन्धनीस्थसार्द्धश्लोकद्वयं क ख पुस्तकयोर्नास्ति । † कुलजां शुभाम् । ग । ‡ भुञ्जानो मदनोद्गतः । ग ।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

भक्षन् ताम्बूलमत्स्यांश्च * भक्ष्यद्रव्यं यथारुचि ॥ १५
मत्स्यं मांसं तथा चौद्रं नानाद्रव्यसमन्वितम् † ।
[भक्ताद्यशेषभक्ष्याणि दत्त्वा द्रव्यं जपेन्मनुम् ‡] ॥ १६
दिक्कालनियमो नात्र स्थित्यादिनियमो न च ।
[सर्व्वथा पूजयेद्देवीमस्नातः कृतभोजनः ॥ १७
महानिश्यशुचौ देशे वलिं मन्त्रेण दापयेत् § ।]
न जपे कालनियमो नार्च्चादिषु वलिष्वपि ॥ १८
स्वेच्छानियम उक्तोऽत्र महामन्त्रस्य साधने ।
वस्त्रासनदेहागारस्थानस्पर्शादिवारिणः ¶ ॥ १९
शुद्धिं नचाचरेत्तत्र निर्व्विकल्पं मनश्चरेत् ।
[सर्व्व एव शुभः कालो नाशुद्धिर्व्विद्यते क्वचित् ॥ २०
न विशेषो दिवारात्रौ न सन्ध्यायां महानिशि ।
नात्र शुद्धेरपेक्षास्ति नचामेध्यादिदूषणम् *] ॥ २१
सुगन्धिश्वेतलोहित्यकुसुमैरर्च्चयेद्दलैः ।
विल्वैर्म्मरुवकाद्यैश्च तुलसीवर्जितैः शुभैः ॥ २२
नाधर्म्मो विद्यते सुभ्रु किन्तु धर्म्मो महान् भवेत् ।
स्वेच्छाचारोऽत्र गदितः प्रचरेद्दृष्टमानसः † ॥ २३
[कृतार्थं मन्यमानस्तु सन्तुष्टो हृष्टमानसः ‡]।
इत्याचारपरः श्रीमान् जपपूजादितत्परः ॥ २४
पालकः कुलतत्त्वानां परतत्त्वे प्रलीयते ।

---

* गन्धताम्बूलमाल्यञ्च । ख । भक्षंस्ताम्बूलमन्यांश्च भक्षद्रव्यान् । ग घ । † भक्ष्यद्रव्याम् यथाविधि । ख । मांसमत्स्यदधिचौद्रपयःशाकाद्यमेवचम् । ग । ‡ केवलं कपुस्तके । § वन्धनीस्थः श्लोकः केवलं क पुस्तके । ¶ वारिणाम् । ग । * वन्धनीस्थः सार्द्धश्लोकः केवलं क पुस्तके विद्यते । † प्रचरेत् शुद्धमानसः । ख । प्रचरेदभ्रष्टमानसः । घ । ‡ श्लोकार्द्धमेतत् केवलं क पुस्तके ।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

gitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalga

उदिताकृतिरानन्दमयः * संसारमोचकः ॥ २५
अनिमाद्यष्टसिद्धीशः साधको देवता † भवेत् ।

इति श्रीकालीतन्त्रे आचारविधिरष्टमः ‡ पटलः ।

नवमः पटलः ।

भैरव उवाच—

एवं समस्तविद्यानां राज्ञी स्तोतुं न शक्यते ।
वक्त्रकोटिसहस्रैस्तु जिह्वाकोटिशतैरपि ॥ १
सर्व्वसिद्धिपरा*भूमिरनिरुद्धसरस्वती ।
तस्मादस्य ज्ञानमात्रात् सिद्धयोऽष्टौ भवन्ति हि ॥ २
अनिरुद्धसरस्वत्या ज्ञानमात्रेण साधकः ।
पाण्डित्ये च कवित्वे च वागीशसमतां व्रजेत् ॥ ३
तस्य पाण्डित्य-वैदग्ध्य-विचित्रपदकल्पनात् † ।
देवा अपि विलज्जन्ते किं पुनर्म्मानवादयः ॥ ४
अस्ति चेत् त्वत्समा नारी मत्समः पुरुषोऽस्ति चेत् ।
अनिरुद्धसरस्वत्याः समो मन्त्रोऽस्ति वै तदा ॥ ५
अस्या जपो ब्रह्मजपो ज्ञानमस्यात्मचिन्तनम् ।
योगसन्धारणा सम्यग्ध्यानमस्या न संशयः ॥ ६
महापदि महापापे महाग्रहनिवारणे ।
महाभये महोत्पाते महाशोके महामये ‡ ॥ ७

---

* मदिरानन्दमानसः संसारमोचकः सदा । ग । मदिरानन्दचित्तस्तु संसारमोचकः सदा । घ । † सिद्धीनामाश्रयः साधको । ख । ‡ आचारकथनं अष्टमः । ख ।

* सर्व्वशुद्धेः परा । क । "सर्व्वसिद्धेः परा" इत्येव पाठः समीचीनतया प्रतिभाति । † पदजल्पनात् । ख घ । पाठजल्पनात् । ग । ‡ महाजये । ख । महोत्सवे । ग घ ।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

महामोहे महाऽसौख्ये महादारिद्र्यसङ्कटे ।
महारण्ये महाशून्ये महास्थाने * महारणे ॥ ८
दुराखग्राने † दुरावासे दुर्भिक्षे दुर्निमित्तके ।
समस्तं प्रसङ्गाते स्मरणादेव नाशयेत् ॥ ९
अस्या ज्ञानं ब्रह्मज्ञानं ‡ ध्यानमस्यात्मचिन्तनम् ।
तस्मादस्याः समा विद्या नास्ति तन्त्रे न संशयः ॥ १०
श्मशानशयनो वीरः § कुलस्त्रीभिर्विहारवान् ।
कुलामृतनिषेवी च कालीतन्त्रार्थचिन्तकः ॥ ११
ब्रह्मादिभवने तस्य समो नास्ति कुतः परः ¶ ।
स एव सुकृती लोके स एव कुलभूषणः ॥ १२
धन्या च जननी तस्य येन देवी समर्च्चिता ।
वक्त्रे सरस्वती तस्य लक्ष्मीस्तस्य सदा गृहे ॥ १३
तीर्थानि देहे तिष्ठन्ति येन देवी समर्च्चिता ।
धनेन धननाथश्च तेजसा भास्करोपमः ॥ १४
बलेन * पवनो ह्येष येन देवी समर्च्चिता ।
गानेन तुम्बुरुः साक्षाद्दाने कर्णसमस्तथा † ॥ १५
दत्तात्रेयसमो ज्ञानी येन देवी समर्च्चिता ।
वह्निरिव रिपोर्हन्ता गङ्गेव मलनाशकः ॥ १६
शुचौ शुचिसमः साक्षादिन्दोरिव ‡ सुखप्रदः ।
पितृदेवसमः शास्ता कालस्येव दुरासदः ॥ १७

---

* महाज्ञाने । ख घ । † दुराध्वाने । ख । दुरापदे । ग घ । ‡ ज्ञानमेव । ख ग घ ।
§ श्मशाने शयने वीरः । ख । श्मशाने वीरशयनः । ग घ । ¶ समोऽस्ति किमुतापरः । ख ।
* वेगेन । ग घ । † ह्यानेन वासवो यथा । ख । देश्वर्य्ये वासवो यथा । घ ।
‡ दिन्दु । ग ।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

gitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalga

वारीश इव गम्भीरो निर्घात इव * दुर्द्धरः ।
बृहस्पतिसमो वाग्मी धरणीसदृशः क्षमी ॥ १८
कन्दर्पसदृशः स्त्रीणां † येन देवी समर्च्चिता ।
अहो भाग्यमहो लोके कुलज्ञानपरायणः ‡ ॥ १९
तेषां मध्येऽपि यः § कोऽपि कालीसाधनतत्परः ।
त्यजसि त्वं वरञ्चैतत् ¶ पुमांसं परमं तथा ॥ २०
मादृशन्तु * क्वचित् काले त्यजसि त्वं कदाचन † ।
कालीज्ञानिनमासाद्य न त्यजसि कदाचन ॥ २१
नहि कालीसमा विद्या ‡ नहि कालीसमं फलम् § ।
नहि कालीसमं ज्ञानं नहि कालीसमं तपः ॥ २२
ये गुणाः परमेशस्य पञ्चकृत्यविधायिनः ।
ते गुणाः सन्ति सर्व्वज्ञे ¶ कालीतत्त्वस्य नान्यथा ॥ २३
कालिकाहृदयज्ञानी लतासाधनतत्परः ।
देववन्मनवो भूत्वा लभेन्मुक्तिञ्च शाश्वतीम् * ॥ २४
इति ते कथितं सम्यक् कालिकातत्त्वमुत्तमम् † ।
अनेन सम्यगास्थाय सर्व्वधर्म्मफलं ‡ लभेत् ॥ २५

इति श्रीकालीतन्त्रे विद्याफलविधिर्नवमः § पटलः ।

दशमः पटलः ।

यथा काली तथा दुर्गा यथा दुर्गा तथोन्मुखी ।
यथा तारा तथा काली * यथा नीला तथोन्मुखी † ॥ १

---

* नृसिंह इव । ख । निर्ऋतेरिव । ग घ । † स्त्रीषु । ग । ‡ कुलज्ञानी भवेन्नरः । घ । § तेषां मध्ये प्रियः कोऽपि । ग । तेषां मध्ये च यः कोऽपि । घ । ¶ परञ्चैव । ख । न कदाचित् । ग घ । * महेशन्तु । घ । † जगन्मये । ख । शुचिस्मिते । ग घ । ‡ पूजा । ख । § श्लोकार्द्धमेतत् गघपुस्तकयोर्नास्ति । ¶ सर्व्वेऽपि । घ । * चतुर्व्विधाम् । ख घ । † काल्यास्तत्त्वमनुत्तमम् । ग घ । ‡ सर्व्वकामफलं । ख ग घ । § विद्यापटले नवमः । क । * नीला । ग । † श्लोकार्द्धमेतत् घपुस्तके नास्ति ।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

दुर्गायाः कालिकायास्तु ध्यानं सम्यगिहोच्यते * ।
महाचीनक्रमेणैव तारा शीघ्रफलप्रदा ॥ २
गन्धर्व्वाखरक्रमेणैव पञ्चमो भुक्तिमुक्तिदा † ।
महाचीनक्रमेणैव ‡ कालिका फलदायिनी § ॥ ३
कालिकोग्रमुखी शस्ता दत्तात्रेयविभाविता ¶ ।
सप्तसप्ततिभेदेन * श्रीविद्या विदिता भुवि ॥ ४
तासान्तु समता ज्ञेया गुप्तसाधनसाधने ।
चत्वारिंशत् प्रकारा च † भैरवी परिकीर्त्तिता ॥ ५
तासान्तु समता ज्ञेया गुप्तसाधनसाधने ।
या या विद्या ‡ महाचण्डा तासामेव $ विधिर्मतः ॥ ६
महाचीनक्रमेणैव ¶ छिन्नमस्ता च सिद्धिदा * ।
यस्मिन् मन्त्रे य आचारस्तस्मिन् † धर्म्मस्तु तादृशः ॥ ७
ज्ञातार्थस्तेन जायेत स्वर्गो वा मोक्ष एव वा ‡ ।
भ्रान्तिश्च न कर्त्तव्या सिद्धिहानिस्तु जायते ॥ ८
विशुद्धचित्तोऽक्षभवेत् सिद्धिः स्यादपवर्गदा ।
एवन्तु तत्क्षणात् § सिद्धिर्व्विस्मयो नास्ति चापरः ॥ ९
विस्मिता विलयं यान्ति पशवः शास्त्रमोहिताः ।
[भैरव उवाच—§]
कालिकाहृदयं विद्यां सिद्धिविद्यां महोदयाम् ॥ १०

---

* सम्यगिहोदितम् । ख । सम्यगिहोदितम् । ग घ । † भुवि दुर्लभा । ख ग घ । ‡ महानील । ख ग । § सिद्धिदायिनी । ख ग । सिद्धिदायिनी । घ । ¶ विभावना । ख ग घ । * भेदा सा । ग घ । † प्रकारेण । क । ‡ महाविद्या । क ख । $ मेव । क ख । ¶ महानील । ग घ । * विधिर्मतः । ख घ । विधिः स्मृतः । ग । † स्तव । ख ग घ । ‡ स्वर्गं वा मोक्षमेव वा । क । मुक्तिरेव वा । ख । मोक्ष एव वा । ग । § एतत्तु तत्क्षणात् । ख ग । तत्र तत्र क्षणात् । घ । ¶ बन्धनीस्थपाठः केवलं खपुस्तके दृश्यते ।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

पुरा येन यथा जप्ता सिद्धिमापुर्दिवौकसः।
कामाक्षरं वह्निसंस्थमिन्दिरा-नाद-विन्दुभिः॥ ११
मन्त्रराजमिदं ख्यातं दुर्लभं पापचेतसाम्।
सुलभं शुभदं * श्रन्नाग्रा साधकानां महात्मनाम्॥ १२
त्रिगुणा तु विशेषेण सर्व्वशास्त्रप्रबोधिका।
अनया सदृशी विद्या नास्ति सारस्वतप्रदा॥ १३
आकर्षण वशीकार-मारणोच्चाटनं तथा।
शान्ति-पुष्ट्यादिकर्म्माणि साधयेदनयाऽचिरात्॥ १४
किंवक्तव्यमनेनापि वर्णितुं नैव शक्यते।
जिह्वाकोटिसमस्रैस्तु वक्त्रकोटिशतैरपि॥ १५
अनया सदृशी विद्या अनया सदृशो जपः।
अनया सदृशं ज्ञानं न भूतं न भविष्यति॥ १६
ध्यान-पूजादिकं सर्व्वं साधनञ्च पुरस्क्रिया।
अनिरुद्धसरस्वत्याः समानं सर्व्वमीरितम् †॥ १७

एकाक्षरमन्त्रमाह—कामाक्षरमित्यादि। कामाक्षरं ककारः, वह्निसंस्थं रेफसंस्थं, इन्दिरा ईकारः, नादः विन्दुश्च एतैर्युक्तम्। तेन क्रीं इत्येकाक्षरमन्त्र आयातः। अस्य कालिकाहृदयमिति संज्ञा। एकाक्षरमन्त्रस्यार्थस्तु प्राणतोषणीधृतवरदातन्त्रे—

"क कालीब्रह्म र प्रोक्तं महामायार्थकश्च ई।
विश्वमात्रार्थको नादो विन्दुर्दुःखहरार्थकः॥
तेनैव कालिकादेवीं पूजयेद्दुःखशान्तये।" इति। ११

त्र्यक्षरमन्त्रमाह—त्रिगुणा त्विति। एकाक्षरी विद्या त्रिगुणा त्रिधा स्थिता। एतेन क्रीं क्रीं क्रीं इति त्र्यक्षरमन्त्र आयातः। १३

एकाक्षर-त्र्यक्षरमन्त्रयोस्तु ध्यानपूजादिकं प्रयोगः पुरश्चरणञ्च सर्व्वं द्वाविंशत्यक्षरमन्त्रवत्। १७

* सुलभा शुभदा। ग घ। † समं पूर्व्ववदाचरेत्। ख। साधनं सर्व्वमीरितम्। ग। साधनं पूर्व्वमीरितम्। घ।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

रक्तै राकर्षणे पुष्पै: पीतैः स्तम्भनकर्म्मणि ।
मारणे कृष्णपुष्पै स्तु पूजयेद्‌घोरदक्षिणाम् * ॥ १८
आद्येकबीजं बीजानाम् तथैवान्तेऽपि चैककम् † ।
[दक्षिणे कालिके चेति मध्ये संयोज्य मन्त्रवित् ‡] ॥ १९
स्वाहान्तं मन्त्रमुच्चार्य्य भवेदाकर्षणं महत् ।
लोहिताङ्कुशहस्ताञ्च § एकशूलधरान्तथा ॥ २०
महाकालसमासीनां ¶ ध्यात्वा चाकर्षणं महत् * ।
स्थावरं जङ्गमञ्चैव पातालतलगन्तथा † ॥ २१
आकर्षयति मन्त्रज्ञः किमन्यद्‌भुवि योषितः ।
अयुतैकजपः प्रोक्तः सदाकर्षणकर्म्मणि ॥ २२
अथान्यत् ‡ सम्प्रवक्ष्यामि वशीकरणमुत्तमम् ।
कूर्च्च-लज्जाद्वयं बीजद्वयं ठान्त' § तथैव च ॥ २३
योजयित्वा जपेद् विद्यामयुतं ¶ वशयेद्‌ध्रुवम् * ।
ध्यानमस्याः † प्रवक्ष्यामि येन वश्यं जगत्त्रयम् ॥ २४
नागयज्ञोपवीताञ्च चन्द्रार्द्धकृतशेखराम् ।
जटाजूटसमासीनां ‡ महाकालसमीपगाम् § ॥ २५
एवं कामसमाविद्धा ¶ विह्वला काममोहिताः * ।
स्वं स्वं सन्त्यज्य † भर्त्तारं यान्ति लोकत्रयाङ्गनाः ‡ ॥ २६

---

* पूजयेदेव दक्षिणाम् । ग । † अस्येकैकान्तु बीजानां तथैवान्ते च चैककम् । ख । आद्येककान्तुबीजानां तथैवान्ते च एककम् । ग घ । ‡ बन्धनीस्थः पाठः कपुस्तके नास्ति । § लोहिताङ्कुशिहस्ता च एकशूलधरा तथा । ख ग घ । ¶ महाकालासमासीना । ख ग घ । * भवेत् । ख । चरेत् । ग घ । † तलेगा । ख ग घ ‡ तथान्यत् । क । § कूर्च्च-लज्जाद्वयं बीजं द्वयचान्ते । क । बीजद्वयचान्ते । ख । बीजं द्वयं ठान्तं । घ । ¶ नियुतं । ग घ । * वशकर्म्मणि । ग घ । † सव । ग । मन्त्रं । घ । ‡ जटायुक्ताञ्च सच्चिन्त्य । घ । § समीपतः क । ¶ कामसमा विद्या । क । कामसमाविद्धा । ख । * निर्लज्जा विह्वलाः स्त्रियः । ग । † स्वं स्वं त्यक्त्वा । क । ‡ आलिङ्गन्ति सदैव तम् । ग ।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

अथ वक्ष्ये महाविद्यां सिद्धिविद्यां * महोदयाम् ।
भैरवेण पुरा प्रोक्ता † कालीहृदयसंज्ञिता ‡ ॥ २७

अस्या ज्ञानप्रभावेण कलयामि जगत्त्रयम् ।
प्रणवं पूर्व्वमुद्धृत्य § हृल्लेखावीजमुद्धरेत् ॥ २८

रतिवीजं समुद्धृत्य ¶ पपञ्चम भगान्वितम् ।
ठद्वयेन समायुक्ता विद्याराज्ञी मयोदिता * ॥ २९

अनया सदृशी विद्या कालिकायास्तु दुर्लभा ।
भैरवोऽस्य ऋषिः प्रोक्तो विराट्‌छन्द उदीरितम् † ॥ ३०

सिद्धकाली ब्रह्मरूपा देवता भुवनेश्वरी ।
रतिवीजं वीजमस्या हृल्लेखा शक्तिरुच्यते ॥ ३१

हृल्लेखया षड्‌दीर्घेण प्रणवाद्येन कल्पयेत् ।
अङ्गषट्‌कं ततो न्यस्य ध्यात्वा देवीं शिवो भवेत् ॥ ३२

विद्यान्तरमाह—प्रणवं पूर्व्वमुद्धृत्येत्यादि । प्रणवम् ओंकारम् । हृल्लेखावीजं ह्रीं । "रतिवीजं निजवीजं । तथाच चामुण्डातन्त्रे—

"रत्याद्या कालिकी पातु द्वाविंशाक्षररूपिणी ।

इत्येकवाक्यत्वात् ।" इति तन्त्रसारकारः । तेन रतिवीजं—क्रीं । भगं एकारः, तेन युक्तः पपञ्चमः मकारः, तेन मे । ठद्वयं—स्वाहा । एतेन ओं ह्रीं क्रीं मे स्वाहा इति षडक्षरमन्त्र आयातः । अस्य महाकालभैरवऋषिर्विराट् छन्दः सिद्धकालीब्रह्मरूपा भुवनेश्वरी देवता क्रीं वीजं ह्रीं शक्तिः । ओं ह्रां हृदयाय नमः इत्यादि क्रमेण द्वाविंशत्यक्षरमन्त्रवत् कराङ्गन्यासौ कुर्य्यात् । सिद्धकाली ब्रह्मरूपा भुवनेश्वरी तु दक्षिणकालिकाया एव रूपभेदः । २८—३२

---

* सिद्धविद्यां । ख घ । † प्रोक्तां । ग । ‡ संस्थिता । क । संज्ञिताम् । ग ।
§ मुच्चार्य्य । क । ¶ समुच्चार्य्य । क । * प्रकीर्त्तिता । ख । महोदया । घ ।
† उदाहृतम् । ख ग घं ।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

खड्गोच्छिन्नेन्दुविम्बस्रवदमृतरसाप्लाविताङ्गी त्रिनेत्रा
सव्ये पाणौ कपालाद्गलदमृत * मथो मुक्तकेशी पिबन्ती।
दिग्वस्त्रा बद्धकाञ्ची मणिमयमुकुटाद्यैर्युता दीप्तजिह्वा
पायान्नीलोत्पलाभा रवि-शशिविलसत्कुण्डलालीढ़पादा॥ ३३

जपेद् विंशतिसाहस्रं सहस्रैकेण संयुतम्।
होमयेत्तद्दशांशेन मृदुपुष्पेण मन्त्रवित्॥ ३४

त्रिकोणं कुण्डमालिख्य † सिद्धविद्यः शिवो भवेत्।
पूजनञ्च प्रयोगञ्च दक्षिणावदुपाचरेत्॥ ३५

एकाक्षर्य्या महाकल्पसमानं सर्व्वमेव धा।
रक्तपद्मस्य ‡ होमेन साक्षाद् वैश्रवणो § भवेत्॥ ३६

विल्वपत्रस्य होमेन राज्यं भवति ¶ निश्चितम्।
रक्तप्रसूनहोमेन वशयेदखिलं जगत्॥ ३७

सिद्धकाली ब्रह्मरूपा भुवनेश्वरीध्यानमाह—खड्गोच्छिन्नेन्दित्यादि। खड्गेन दक्षहस्तस्थितेन उच्छिन्नं विदीर्णं यदिन्दुविम्बं चन्द्रमण्डलं तस्मात स्रवन् क्षरन् योऽमृतरसः तेन आप्लावितं अङ्गं यस्याः सा खड्गोच्छिन्नेन्दुविम्बस्रवदमृतरसाप्लाविताङ्गी। सव्ये पाणौ कपालात्—वामहस्तस्थित-कपालभाजनात् गलत् पतत् अमृतं सुधां पिबन्ती पानशीला। एतेन—द्विभुजा, दक्षहस्ते खड्गः, वामहस्ते पानपात्रं नरकपालं, इत्यायाति। त्रिनेत्रा। मुक्तकेशी। बद्धकाञ्ची—बद्धा नरकरैरिति शेषः, काञ्ची मेखला यया सा। मणिमयमुकुटाद्यैरलङ्कारैर्युता। दीप्त-जिह्वा—दीप्ता प्रकाशमाना जिह्वा यस्याः सा ललज्जिह्वेत्यर्थः। नीलोत्पलाभा—नीलोत्-पलस्येव आभा कान्तिर्य्यस्याः सा, नीलोत्पलसदृशनीलवर्णेत्यर्थः। रविशशिविलसत्कुण्डला—रविशशिभ्यां विलसन्ती शोभमाने कुण्डले कर्णभूषणे यस्याः सा। आलीढ़पादा—वामपादमग्रतो विन्यस्यावस्थिता "आलीढ़ं वामपादन्तु प्रत्यालीढ़न्तु दक्षिणम्" इति गुप्तसाधनतन्त्रवचनात्। अत्रानुक्तेऽपि शवरूपमहादेवोपरिस्थितेत्युन्नेयं सम्प्रदायस्वरसात् आलीढ़पादेत्युक्तेश्च। तेन शवरूपमहादेवस्य हृदये वामपादं ऊरुद्वये दक्षपादं विन्यस्यावस्थितेति ज्ञेयम्। एवम्भूता देवी पायात् अस्मान् सर्व्वदा रक्षेत्। ३३

---

* गलदसृज। ख घ। † कुण्डमासाद्य। ख ग घ। ‡ रक्तपुष्पस्य। क।
§ वैश्वानरो। क। ¶ प्राप्नोति। ख।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

gitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalga

पीतपुष्पस्य होमेन स्तम्भयेद्वायु * मप्यथ ।
[मालतीपुष्पहोमेन साक्षाद् वाक्पतिसन्निभः ॥३८
कृष्णपुष्पस्य होमेन शत्रून्मारयतेऽचिरात् ।
अत्र सर्व्वस्य होमस्य † संख्या स्यादयुतावधि ‡]॥ ३९
अस्याः स्मरणमात्रेण महापातककोटयः ।
सद्यः प्रलयमायान्ति साधकः खेचरो भवेत् ॥ ४०
इति श्रीकालीतन्त्रे सिद्धविद्याविधिः § दशमः पटलः ।

एकादशः पटलः ।

भैरव उवाच—
[अथोच्यते कालिकायाः सामान्यसाधनं प्रिये ।
कृतेन येन विधिवत् पलायन्ते महापदः *]॥ १
शिवाबलिश्च दातव्यः सर्व्वसिद्धिमभीप्सुभिः ।
महोत्पाते महाघोरे महारोगे † महाग्रहे ॥ २
महापदि महायुद्धे महाविग्रहसङ्कुले ‡ ।
महादारिद्र्यशमने महादुःखप्रदर्शने § ॥ ३
महाशान्तौ महावश्ये ¶ महास्वस्त्ययने तथा ।
घोराभिचारशमने * घोरोपद्रवनाशने ॥ ४
कूटयुद्धादिशमने † कूटशत्रुनिवारणे ‡ ।
राजादिभयशान्तौ च राजक्रोधप्रशान्तये § ॥ ५

---

* वह्नि । क । † सर्व्वेषु होमेषु । ग । ‡ बन्धनीस्थः सार्द्धश्लोकः कपुस्तके नास्ति । § सिद्धविद्यापटलः । क ।

* बन्धनीस्थः श्लोकः क ख पुस्तकयोर्नास्ति । † महारोगे महोत्पाते महादोषे । क ख । महारोगे महादोषे । ग । महादोषे । घ । ‡ महासङ्कुलसंग्रहे । क । निग्रहसङ्कुले । ग । § महादुःखप्रदर्शने । क घ । ¶ महावश्ये । क । महावाश्ये । ख । * घोराभिगमने घोरे । क । † युद्धाभिगमने । क । ‡ निपातने । क । § राजोपद्रवनाशने । क ।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

न ददाति बलिं यस्तु शिवायै शिवतामये ।
स पापिष्ठो नाधिकारी कुलदेव्याः समर्च्चने * ॥ ६
कुलीनं नावमन्येत कुलज्ञं † परिपूजयेत् ।
कुलज्ञेषु ‡ प्रसन्नेषु कालिकासन्निधि § र्भवेत् ॥ ७
अहो धन्यवतां लोके जानाति ¶ कुलदर्शनम् ।
तेषां मध्ये तु यः कश्चित् * कुलदेवीं समर्च्चयेत् ॥ ८
[कुलाचारविहीनो यः पूजयेत् कालिकां नरः ।
स स्वर्गमोक्षभागी च न स्यात् सत्यं न संशयः †] ॥ ९
आयुरारोग्यमैश्वर्य्यं बलं पुष्टिं महद्यशः ।
कवित्वं भुक्तिमुक्ती च कालिकापादपूजनात् ॥ १०
शुक्लेन ध्यानयोगेन कविता ‡ वशवर्त्तिनी § ।
पीतेन ध्यानयोगेन स्तम्भयेदखिलं जगत् ¶ ॥ ११
कृष्णाभा शत्रुमरणे धूम्राभा * वैरिनिग्रहे ।
अनया विद्यया मन्त्री स्पृशेत् पातकिनं यदि ॥ १२
स तु संस्पर्शमात्रेण वह्निसौधीमनर्गलाम् † ।
कुमारीपूजनं कुर्य्यात् सर्व्वधर्म्म ‡ फलाप्तये ॥ १३
[भैरव उवाच — §
अथान्यत् संप्रवक्ष्यामि प्रयोगं शत्रुनिग्रहम् ।

---

* शिवदृप्तये । ग घ । † "स पापिष्ठो न लब्धेत कुलदेव्याः समर्च्चने । क । स पापिष्ठस्तु लब्धेत कुलदेव्याः प्रपूजने । ख । ‡ देवीवत् । क । § कुलजेषु । क । ¶ सन्निधी । क । * तथेति । क । अहो भाग्यवतां लोके जानाति । ख । अहो धन्यतरा लोके जानन्ति । ग । † मध्येऽपि यः कोऽपि । ख घ । ‡ बन्धनीस्थः श्लोकः क ख पुस्तकयोर्नास्ति । § कालिका । ख । ¶ वशयेदखिलं जगत् । ग । कविता वशवर्त्तिनी । घ । * कृष्णेन शत्रुशमनं धूम्राभं । क । कृष्णाभां शत्रुमरणे धूम्राभां । ख । † वह्निसौधीं निराकुलम् । क । मुक्तिसौख्यमनर्गलम् । ख । ‡ कर्म्म । ख ग घ । § "भैरव उवाच" इति पाठः केवलं खपुस्तके ।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

gitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalga

सर्व्वान्ते वह्निजनितां योजयित्वाऽयुतं जपेत् ॥ १४

कालिकां * द्विभुजां कर्त्तृकपाले सव्य-दक्षिणे † ।

एवं ध्यात्वा तु शत्रूणां मारणं समुपाचरेत् ‡ ॥ १५

एवं कालोमतं प्रोक्तं सर्व्वसिद्धिप्रदायकम् § ।

अनया विद्यया सम्यक् साधयेत् स्वमनोषितम् ॥ १६

अनया विद्यया यद्यत् साधयति ¶ साधकः ।

तत्तत्सर्व्वेषु तन्त्रेषु नास्ति सत्यं न संशयः ॥ १७

कालनियन्त्रणात् कालो ज्ञानतत्त्वप्रदायिनी * ।

तस्मात् सर्व्वप्रयत्नेन यजेदुभयसिद्धये †] ॥ १८

कालीमतमिदं दिव्यं भैरवेण प्रकाशितम् ।

न कुत्रापि प्रवक्तव्यं साधकैश्च ‡ स्वपौरुषम् ॥ १९

[एतत्तन्त्रञ्च मन्त्रञ्च ध्यानञ्चैव प्रपूजनम् § ।]

प्रकाशात् सिद्धिहानिः स्यात् तस्माद्यत्नेन गोपयेत् ॥

तस्मात् सर्व्वप्रयत्नेन गोप्तव्यं देवतागणैः ¶ ।

यथा मनुष्यो लभ्येत * तथा कार्य्यं महेश्वरि ॥ २१

यो भक्तः साधयेद्‌ज्ञानी तस्मै नित्यं † प्रकाशयेत् ।

इति श्रीकालोतन्त्रे [परमरहस्ये कालीकल्पे]

एकादशः पटलः समाप्तः ८ ।

---

* कपिलां । ख । † सव्यदक्षिणाम् । ख । ‡ समुदाहृतम् । घ । § सिद्धिरनुष्ठितम् । ग । सिद्धेरनुष्ठितम् । घ । ¶ धारयति । ख । * प्रदर्शिनी । ग घ । † यजेदभयसिद्धये । ख ग । ‡ बन्धनोस्थाः श्लोकाः कपुस्तके न सन्ति । § साधकेन । ख ग घ । ¶ श्लोकार्द्ध-मेतत् कपुस्तके नास्ति । * गोप्तव्यं हि त्वया प्रिये । ग घ । † यथा मर्त्यो न लभते । ख । यथा ह्यन्यो न लभते । ग घ । ‡ साधको मन्त्री तस्मै सत्यं । ख । यो भक्तः साधको ज्ञानी तस्मै ज्ञानम् । ग । यो भक्तः साधको ज्ञानी तस्मै नित्यं । घ । § बन्धनीस्थः पाठः कखपुस्तकयोर्नास्ति ।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

द्वादशः पटलः । *

भैरव उवाच—

त्वयोक्तं पूजनं देव साधनेन पुरस्कृतम् ।
इदानीं श्रोतुमिच्छामि वीरनित्यक्रियां प्रभो ॥ १

भैरवुवाच —

प्रातःकृत्यं ततो न्यास ऋष्याद्यङ्गाङ्गुलैरपि ।
वर्णव्यापकविन्यासः पीठन्यास तुवःपरम् ॥ २
ततोऽन्तर्यजनं देवि योगियोगानिशा (?) प्रिये ।
पञ्चमानां प्राशनञ्च जपो रात्रौ विधानतः ॥ ३
स्तोत्रपाठो यत्र तत्र समये च वरानने ।
वीरश्रद्धा तर्पणञ्च तथालापः स्त्रियामपि ॥ ४
विजयाङ्गीकृतिश्चैव स्वसुखोद्देशनं तथा ।
अप्रकाशः कुलाचारे मृदुभाषा च सर्व्वतः ॥ ५
गुर्व्वनुज्ञामात्रेणैव सर्व्वाचारविधिः प्रिये ।
एवमादीनि चान्यानि वीरनिन्दा न सुव्रते ॥ ६
इति परम्परया ह्येन च रुद्रा देवि तच्चीने प्रतिष्ठितम्
अन्यत्र विप्रयेन्नास्ति सत्यमेतद्ब्रवीमि ते ॥ ७
वामाचारः कुलाचारश्चीननाथेन शङ्करात् ।
प्रकाशितः शङ्करेण महारुद्रात् प्रकाशितः ॥ ८
महाचीनाधिपो देवो माहात्म्येन तयाद्वयोः ।
कुलाचारं कुलश्रेष्ठे वामाचारः प्रयत्नतः ॥ ९
अस्यैवाशेषमाहात्म्यं चीनतन्त्रे मयोदितम् ।
कुलाचारमशेषेण चीननाथेन वेत्त्यपि ॥ १०

---

* द्वादशपटलस्तु अशुद्धिबहुलः केवलं घपुस्तके विद्यते ।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

यद्यद्दृष्टं श्रुतं यद्यद्गुरुः साधकवन्नतः।
तत्तत् कार्य्यं वीरवर्य्यैस्तेन सिद्धिर्भवेत् प्रिये ॥ ११
क्वचिच्चण्डः क्वचिद्भण्डः क्वचिद्भूतपिशाचवत्।
क्वचिद्देवार्च्चनरतः क्वचित्तन्निन्दकस्तथा ॥ १२
भवेच्छीलरतो वीरो महारुद्रस्य शासनात्।
भक्षणञ्च विधिं वक्ष्ये प्रश्नमादौ यथाविधि ॥ १३
आदौ गुरुं स्मरन् पश्चात् कुण्डलीं परिभाव्य च।
आजिह्वान्तस्तर्पणेन भक्षयेन्नतिपूर्व्वकम् ॥ १४
गुरुं नत्वा ततो ज्येष्ठं शक्तो नतिपरायणः।
ज्येष्ठत्वं वा कनिष्ठत्वं कुलाचारविधानतः ॥ १५
अभिषेक्ता गुरुः साक्षान्मन्त्रदेन समः स्मृतः।
अभिषेके विनाभूते प्रधानत्वं करोति यः ॥ १६
चत्वारि तस्य नश्यन्ति आयुर्व्विद्यायशोबलम्।
तद्विधिस्त्वोत्तरातन्त्रे पाशवेन विसिञ्चितः ॥ १७
वीरैर्ग्राह्यः प्रयत्नेन हंसैः क्षीरं जलाद्यथा।
आचारोऽयं शक्तिमन्त्रे सर्व्वत्र परिकथ्यते ॥ १८
विशेषात् कालिकातारा-भैरव्यादिषु पञ्चसु।
कालिका-तारिणीभेदं यः करोति स नारकी ॥ १९
यत्र यत्र कालिकेति नाम संश्रूयते प्रिये।
तत्र ताराविधानञ्च युते नात्र संशयः ॥ २०
यद्यदन्यत् साधनञ्च नान्यत्रापि नोदितम्।
तत् सर्व्वं पूर्व्वपूर्व्वेण तन्त्रेण ज्ञायते प्रिये ॥ २१
न पूजा न्यासजालं वा स्त्रीणां केवलजापतः।
सिद्धिर्भवति देवेशि कुलाचारविधानतः ॥ २२
अथ चेत् क्रियते न्यासस्तदा शृणु विधिं प्रिये।
ऋष्याद्यङ्गकपीठानां न्यासं कृत्वा च संस्मरेत् ॥ २३

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

ततः सोऽहमिति ध्यायेन्महाचीनमतं यथा।
कालीतन्त्रं कौलतन्त्रं तारातन्त्रं तथा प्रिये ॥ २४
चीनतन्त्रं स्वतन्त्रञ्च युगपद्वक्तृतः स्मृतम्।
अथ यद्यन्मतं प्रोक्तं तत् पञ्चसु समाचरेत् ॥ २५
गुरुपादप्रसादेन शुभादृष्टस्य योगतः।
आचारः प्राप्यते वीरैर्नात्र कार्य्यस्य संशयः ॥ २६
तदैव तुष्टा सा देवी निर्व्विकल्पः स्वयं यदि।

इति श्रीकालीतन्त्रे परमगुह्याचारे द्वादशः पटलः।

समाप्तमिदं कालीतन्त्रम्।

gitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalga

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

কালীতন্ত্রের বঙ্গানুবাদ।

প্রথম পটল।

কৈলাশশিখরে উপবিষ্ট মহাদেবকে পার্ব্বতী জিজ্ঞাসা করিয়াছিলেন,—

হে মহাদেব, চতুর্ব্বর্গফলপ্রদ ব্রহ্মস্বরূপ কালিকাদেবীর মহাবিদ্যা (অর্থাৎ মহামন্ত্র) এবং মন্ত্রভেদ ও পূজাভেদ আমি শুনিতে ইচ্ছা করি। ১—৩

মহাদেব বলিলেন—মহামায়া মহাযোগীশ্বরী পরব্রহ্মস্বরূপিণী সেই মহাবিদ্যা সর্ব্ববিদ্যার মহারাজ্ঞী এবং সর্ব্ববিদ্যাপ্রদায়িনী। যথাক্রমে তিনটি ককারে রেফ, দীর্ঘ ঈকার এবং বিন্দু যোগ করিলে তিনটি বীজ হইবে। তাহার পর কূর্চ্চবীজ (হূং) দুইটি, তাহার পর লজ্জাবীজ (হ্রীং) দুইটি, তাহার পর "দক্ষিণে কালিকে" এই পদদ্বয়, তাহার পর যথাক্রমে পূর্ব্বকথিত সাতটি বীজ, তদন্তে "স্বাহা" যোগ করিলে দক্ষিণা কালীর দ্বাবিংশত্যক্ষর মন্ত্র হইবে। এই মন্ত্রে সিদ্ধ, সাধ্য, সুসিদ্ধ, অরি প্রভৃতি চক্রবিচারের প্রয়োজন নাই। ইহার উপাসনায় যুগভেদে চতুর্গুণ জপাদিরূপ প্রয়াস বাহুল্য, অথবা যোগাবলম্বনে শারীরিক ক্লেশেরও প্রয়োজন নাই। এই মন্ত্রের স্মরণমাত্রেই মানুষ জীবন্মুক্ত হইতে পারে। এই মন্ত্রের ঋষি ভৈরব (মহাকাল), ছন্দঃ উষ্ণিক্, দেবতা কালিকা, বীজ লজ্জাবীজ (হ্রীং), শক্তি কূর্চ্চবীজ (হূং), এই বিদ্যা অনিরুদ্ধ সরস্বতী, অর্থাৎ ইঁহার উপাসনায় অনর্গল বাগ্মিতা জন্মে। কবিত্বার্থে এই মন্ত্রের বিনিযোগ। এই প্রকার ঋষ্যাদি কল্পনা করিবে। ৪—১০

ওঁ ক্রাং হৃদয়ায় নমঃ, ওঁ ক্রীং শিরসে স্বাহা, ইত্যাদিক্রমে অঙ্গন্যাস করন্যাস করিবে। তৎপরে বর্ণন্যাস (বর্ণন্যাস প্রভৃতির প্রয়োগ টীকায় দ্রষ্টব্য) ও ব্যাপকন্যাস করিয়া পীঠন্যাস করিবে। হৃৎপদ্মে সুধাসমুদ্র, তন্মধ্যে রত্নদ্বীপ, তন্মধ্যে চতুর্দ্দিকে পারিজাত বৃক্ষ, মধ্যে কল্পতরু, তন্মূলে স্বর্ণনির্ম্মিত দ্বারচতুষ্টয়-শোভিত চিন্তামণি গৃহ, তথায় মন্দবায়ু কর্ত্তৃক সুগন্ধ বিকীর্ণ হইতেছে। তৎপরে শ্মশান, তাহার মধ্যে কল্পবৃক্ষ, তাহার মূলে নানামণিভূষিত মণিময় পীঠ, চতুর্দ্দিকে শ্মশানস্থ শবমাংসাদি ভক্ষণে পরিতৃপ্ত শিবাগণ বিচরণ করিতেছে, শবমুণ্ড, চিতা-

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalga

ঙ্গার, অস্থি প্রভৃতি ছড়াইয়া আছে। সেই মণিপীঠের অষ্ট দিকে ইচ্ছা, জ্ঞানা, ক্রিয়া, কামিনী, কামদায়িনী, রতি, রতিপ্রিয়া, নন্দা, এই অষ্ট শক্তি এবং মধ্যে মনোন্মনী শক্তি অবস্থিতা। এই নবশক্তির মস্তকে মহাপ্রেতরূপী সদাশিব শায়িত। এই প্রকার পীঠ কল্পনা করিয়া শবরূপী সদাশিবের উপরি দেবীর ধ্যান করিবে। ১১—২৭

ভীষণ শ্মশানভূমি, চতুর্দ্দিকে শিবাগণ ঘোররবে চীৎকার করিতেছে। এইরূপ শ্মশানের মধ্যে শবরূপ মহাদেবের হৃদয়োপরি দেবী অবস্থিতা। দেবীর দক্ষিণপদ শবের হৃদয়ে ও বামপদ শবের উরুদ্বয়ে ন্যস্ত। দেবীর অঙ্গভঙ্গী এইরূপ—যাহাতে আলুলায়িত লম্বমান কেশসমূহ দেবীর দক্ষিণ অঙ্গ ব্যাপিয়া আছে। নয়নত্রয় নবোদিত সূর্য্যের মত রক্তবর্ণ। মুখ ভক্তের পক্ষে প্রস্ফুটিত পদ্মের মত আনন্দদায়ক ও প্রফুল্ল, কিন্তু অভক্তের পক্ষে ভয়প্রদ, বহুদন্ত উপর্য্যুপরি সন্নিবিষ্ট, সম্মুখের দন্ত উন্নত, ললজ্জিহ্বা, ওষ্ঠের প্রান্তদ্বয় হইতে পীতাবশিষ্ট রক্তধারায় শোভমান মুখ, মুখে ঈষৎ হাস্যের ভাব। দুইটি মৃত নরশিশুব দ্বারা কর্ণের ভূষণ। চারিটি হাত, বামদিকের অধোহস্তে সদ্যশ্ছিন্ন নরমুণ্ড এবং ঊর্দ্ধ হস্তে উন্মুক্ত খড়্গ, দক্ষিণ দিকের ঊর্দ্ধ হস্তে অভয়মুদ্রা এবং অধোহস্তে বরদমুদ্রা। গলদেশে পাদপদ্মপর্য্যন্ত প্রলম্বিত মুণ্ডমালা, এই মালা পঞ্চাশটি নরমুণ্ড দ্বারা পরস্পর কেশের দ্বারা গ্রথিত। স্তনদ্বয় উন্নত ও স্থূল। কটিতে বস্ত্র নাই, কিন্তু ছিন্ননরকরসমূহদ্বারা রচিত কাঞ্চী অর্থাৎ চন্দ্রহার বিন্যস্ত। দেবীর দেহ বর্ষাগোন্মুখ মহামেঘের মত শ্যামবর্ণ এবং মুণ্ডমালা হইতে গলিত রুধিরে চর্চ্চিত। তিনি শিবকে অধঃশায়িত করিয়া তাঁহার উপরে উলঙ্গবেশে নৃত্য করিতেছেন, তাহাতে বোধ হইতেছে যেন—তিনি মহাকালের সহিত বিপরীত রতিতে আসক্ত। দেবী ঘোররাবা অর্থাৎ তাঁহার শব্দ অভক্তের ভয়প্রদ। তাঁহার মূর্ত্তি অতিশয় উগ্র, এবং স্থূল ইন্দ্রিয়ের বিষয়ীভূত নহে। ধর্ম্ম, অর্থ, কাম ও মোক্ষ এই চতুর্ব্বর্গসিদ্ধির জন্য দক্ষিণা কালীকে এই প্রকার চিন্তা করিবে। ২৭—৩৪

দেবীর পূজাবিধি কথিত হইতেছে। ইঁহার পূজায় মুমুক্ষু পুরুষের মুক্তি এবং ভোগেচ্ছু পুরুষের সর্ব্বকামনা সিদ্ধ হয়। ৩৫—৪০

প্রথমতঃ (পূজার আধার) যন্ত্র কথিত হইতেছে। প্রথম একটি অধোমুখ

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

ত্রিকোণ অঙ্কিত করিবে. এই ত্রিকোণকে গর্ভীভূত করিয়া পরে পরে আরও চারিটি ত্রিকোণ করিবে। এইরূপ পাঁচটি ত্রিকোণ হইবে, ত্রিকোণগুলি সমবাহু ত্রিভুজ হইবে। ত্রিকোণগুলিকে গর্ভীভূত করিয়া একটি বৃত্ত, বৃত্তের বাহিরে অষ্টদল পদ্ম, পদ্মের বাহিরে আবার বৃত্ত, বৃত্তের বাহিরে চতুর্দ্বারযুক্ত চতুরস্র ভূবিম্ব অর্থাৎ একটি বর্গক্ষেত্র অঙ্কিত করিবে। (কালীতন্ত্রে উক্ত না হইলেও প্রথম ত্রিকোণের ঠিক মধ্যস্থলে একটি বিন্দু এবং ক্রীং হ্রীং এই দুইটি বীজ লিখিবে। ইহাই দক্ষিণাকালী পূজার যন্ত্র। ৪০—৪৩

তাহার পর পীঠপূজা করিয়া স্ববামে অর্ঘ্যস্থাপন করিবে। অতঃপর ষড়ঙ্গ পূজা করিয়া আবার ধ্যান করিবে। তদনন্তর হৃৎপুণ্ডরীকে প্রকাশমানা দেবীকে যন্ত্রমধ্যে আবাহন করিয়া যথালব্ধ উপচার দ্বারা পূজা করিবে। ৪৪—৪৫

তাহার পর দেবীকে নমস্কার করিয়া আবরণ দেবতার পূজা করিবে। যথা—যন্ত্রস্থ পঞ্চত্রিকোণের পঞ্চদশকোণে বামাবর্তে কালী, কপালিনী, কুল্লা, কুরুকুল্লা, বিরোধিনী, বিপ্রচিত্তা, উগ্রা, উগ্রপ্রভা, দীপ্তা, নীলা, ঘনা, বলাকা, মাত্রা, মুদ্রা, মিতা এই পঞ্চদশ দেবতার পূজা করিবে। এই কাল্যাদি পঞ্চদশ দেবতা শ্যামবর্ণা, ইঁহাদের দক্ষিণহস্তে অসি, বামহস্তে তর্জনী অর্থাৎ তাড়ন যষ্টি, গলে মুণ্ডমালা, মুখে ঈষৎ হাস্য। তদনন্তর ব্রাহ্মী, নারায়ণী, মাহেশ্বরী, চামুণ্ডা, কৌমারী, অপরাজিতা, বারাহী, নারসিংহী এই অষ্টমাতৃকার পূজা করিবে। প্রত্যেক দেবতাকে অনুলেপন, গন্ধ, ধূপ, দীপ তিন তিন বার প্রদান করিবে। তদনন্তর গুরুপঙক্তিপূজা, ষড়ঙ্গপূজা ও ইন্দ্রাদি দশদিক্ পালের পূজা করিবে। ৪৬—৫৩

আবরণদেবতা পূজার পরে মূলদেবতাকে আবার যথাশক্তি নৈবেদ্যাদি প্রদান করিবে। তদনন্তর গুরুপ্রণাম করিয়া মূলদেবতাকে চিন্তা করত মূলমন্ত্র অষ্টোত্তর সহস্র জপ করিবে। তাহার পর "গুহ্যাতিগুহ্য গোপ্ত্রী" ইত্যাদি মন্ত্রের দ্বারা তেজোময় জপফল দেবীর বামহস্তে অর্পণ করিবে। তৎপর মস্তকে পুষ্প প্রদান করত অষ্টাঙ্গ প্রণাম করিয়া সংহার মুদ্রার দ্বারা দেবীকে বিসর্জন করত স্বহৃদয়ে আনয়ন করিবে। পুরশ্চরণকালেও এইরূপ পূজা করিবে। ৫৪—৫৮

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

gitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalga

দ্বিতীয় পটল।

এখন কথিত মন্ত্রের পুরশ্চরণ কথিত হইতেছে। যেমন জীবহীন দেহ সেইরূপ পুরশ্চরণহীন মন্ত্র কোন কার্য্যসাধনে সমর্থ হয় না। পুরশ্চরণ দ্বারা ভাগ্যহীন মুর্খেরও সকল কামনা সিদ্ধ হয়। এই মন্ত্রের লক্ষজপে পুরশ্চরণ। পশুভাবে হবিষ্যাশী ও সংযত হইয়া প্রাতঃকাল হইতে মধ্যাহ্নের মধ্যে জপ করিতে হইবে। বীরভাবে পঞ্চমকারযুক্ত হইয়া রাত্রিতে জপ করিবে। নানাচারপরায়ণ হইবে না, অর্থাৎ পশুভাবের সাধক পশ্বাচারেই পুরশ্চরণ করিবে, বীরাচার অবলম্বন করিবে না, বীরভাবের সাধকও বীরাচারেই পুরশ্চরণ করিবে, পশ্বাচার অবলম্বন করিবে না। পুরশ্চরণকালে দেবীপূজার বলিদান ভিন্ন অন্যরূপ প্রাণিহিংসা করিবে না এবং কাহারও নিন্দা করিবে না। এইরূপে পুরশ্চরণের দ্বারা মন্ত্র সিদ্ধি লাভ করিয়া পরে শান্তিক, পৌষ্টিক, বশীকরণ, উচ্চাটন প্রভৃতি প্রয়োগ করিতে পারিবে। পুরশ্চরণের দ্বারা মন্ত্র সিদ্ধি লাভ না করিলে প্রয়োগে অধিকার হয় না। ১—৭

মন্তব্য—মূলে "লক্ষমেকং জপেদ্বিদ্যাং হবিষ্যাশী দিবা শুচিঃ" ইহার দ্বারা পশুভাবের পুরশ্চরণ, এবং "রাত্রৌ তাম্বূলপূরাস্যঃ শয্যায়াং লক্ষমানতঃ" ইহার দ্বারা বীরভাবের পুরশ্চরণ কথিত হইয়াছে। উভয় মতেই লক্ষ জপ। পুরশ্চরণের পদ্ধতি কালীতন্ত্রে উক্ত হয় নাই, গ্রন্থান্তরে উক্ত হইয়াছে।

তৃতীয় পটল।

পুরশ্চরণের জপ, হোম, তর্পণ, অভিষেক, ব্রাহ্মণভোজন এই পঞ্চাঙ্গ করিতে হয়। দ্বিতীয় পটলে জপের বিধি উক্ত হইয়াছে। এই পটলে হোম ও তর্পণের বিধি কথিত হইয়াছে, অভিষেক ও ব্রাহ্মণভোজনের কথা উক্ত হয় নাই। বীরভাবের হোম ও তর্পণই কথি হইয়াছে, পশুভাবের উল্লেখ নাই। *লতাপুষ্প যুক্ত বিল্বপত্র, ঘৃত, ভাত, মাংস, রুধির, কৃষ্ণপুষ্প প্রভৃতির দ্বারা শ্মশানে হোম করিতে হয়। এইরূপ হোমে সর্ব্ববিধ কামনা সিদ্ধি, অণিমাদি অষ্টসিদ্ধি, পাণ্ডিত্য, বাগ্মিতা প্রভৃতি ফল লাভ হয়। রক্তধারাযুক্ত জল, স্বকীয় অথবা

---

* অপ্রকাশ্য বীরদ্রব্যবিশেষ।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

পরকীয় মজ্জা, শক্তি-কুল-প্রক্ষালিত জল, মেষ, মহিষ, নর, মূষিক, মার্জ্জার প্রভৃতির রক্ত, এই সকলের মধ্যে যে কোন দ্রব্যের দ্বারা তর্পণ করিবে। এইরূপ তর্পণেও পূর্ব্বোক্ত সমুদয় ফল লাভ হয়। এই প্রকার ক্রিয়ায় পাপ-পুণ্যের ক্ষয় হইয়া সাধক জীবন্মুক্তি লাভ করে।

চতুর্থ পটল।

এই পটলে বীরভাবসম্মত নানারূপ কাম্যবিধি কথিত হইয়াছে। এই সকল কাম্যবিধিতে অতিনিগূঢ় রহস্য নিহিত আছে। অনুবাদে সেই সকল নিগূঢ় রহস্য প্রকাশ করা অসম্ভব মনে করিয়া পরিত্যক্ত হইল। এই পটলে স্ত্রীপ্রশংসা উক্ত হইয়াছে। স্ত্রীদিগকে প্রহার বা নিন্দা করিবে না, তাহাদের প্রতি কুটিল বা অপ্রিয় ব্যবহার করিবে না। স্ত্রীকেই দেবতা, স্ত্রীকেই প্রাণ এবং স্ত্রীকেই ভূষণরূপ মনে করিবে। স্ত্রীকর্ত্তৃক আহৃত পুষ্প, জল, ভোজ্য প্রভৃতির দ্বারা দেবতার অর্চ্চনা করিবে।

পঞ্চম পটল।

প্রথম পটলের প্রথমেই দক্ষিণা কালীর দ্বাবিংশত্যক্ষর মন্ত্র উদ্ধৃত করিয়া চতুর্থ পটল পর্য্যন্ত তাঁহারই সাধনপ্রণালী কথিত হইয়াছে। পঞ্চম পটলে দক্ষিণা কালীর অন্য মন্ত্র কথিত হইতেছে। ১ম শ্লোক হইতে ১৪শ শ্লোকের প্রথমার্দ্ধ পর্য্যন্ত এই মন্ত্রসাধনার ফল উক্ত হইয়াছে; শ্লোকগুলি অতি সরল। ১৪শ শ্লোকের শেষার্দ্ধ ও ১৫শ শ্লোকে যে মন্ত্র উদ্ধৃত হইয়াছে, তাহা কেবলমাত্র একটি পুস্তকে আছে, অন্য পুস্তকে নাই। বিশেষতঃ প্রথম শ্লোকে "অথাতঃ সম্প্রবক্ষ্যামি মন্ত্রং কল্পদ্রুমং পরম্" এই বাক্যে "মন্ত্রং" এই এক বচন নির্দ্দেশ দ্বারাও একটি মন্ত্রই সূচিত হইয়াছে। এই কারণে পঞ্চদশাক্ষর মন্ত্রটি প্রক্ষিপ্ত বলিয়া বোধ হইতেছে।

পঞ্চদশাক্ষর মন্ত্র—"নমঃ" এই স্বরূপ, পাশ—আং, অঙ্কুশ—ক্রোং, এই দুইটি বীজের প্রত্যেকটি দুইবার উচ্চারণ করিবে, "ফট্ স্বাহা কালি কালিকে" এই স্বরূপ, দীর্ঘতনুচ্ছদ—হূং। এইগুলি যথাক্রমে একত্র করিলে পঞ্চদশাক্ষর মন্ত্র হইবে। ১৪—১৫

একবিংশত্যক্ষর মন্ত্র—মায়াদ্বয়—হ্রীং হ্রীং, কূর্চ্চযুগ্ম—হূং হূং, দীর্ঘ ঈকার, বিন্দু

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

gitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalga

ও নাদযুক্ত রেফান্ত ককারত্রয়, "দক্ষিণে কালিকে" এই স্বরূপ, পরে বিলোমে পূর্ব্বোক্ত সাতটি বীজ এবং আদিতে প্রণব যোগ করিলে একবিংশত্যক্ষর মন্ত্র হইবে। বিদ্যাসংজ্ঞক মন্ত্রের মধ্যে এই মন্ত্র রত্নস্বরূপ বলিয়া ইহার নাম বিদ্যারত্ন। এই মন্ত্রের পূজা প্রভৃতি দ্বাবিংশত্যক্ষর মন্ত্রের মত*। ১৬—১৮

ষষ্ঠ পটল।

এই পটলে নানারূপ বীর সাধন উক্ত হইয়াছে। প্রথম ৬ শ্লোকে চতুষ্পথ সাধন কথিত হইয়াছে। ৭ম শ্লোকে নির্জ্জন অরণ্যে সূর্য্যোদয় হইতে সূর্য্যাস্ত পর্য্যন্ত জপের দ্বারা সর্ব্বসিদ্ধি লাভ উক্ত হইয়াছে। ৮ম হইতে ১০ম শ্লোকের পূর্ব্বার্দ্ধ পর্য্যন্ত এক প্রকার শব সাধন কথিত হইয়াছে। ১০ম হইতে ১৩শ শ্লোক পর্য্যন্ত তিলকবিশেষের দ্বারা সিদ্ধিলাভ ও লোকবশীকরণ বিহিত হইয়াছে। ১৪শ হইতে ১৮শ শ্লোক পর্য্যন্ত অন্য প্রকার শবসাধনদ্বারা সিদ্ধিলাভ কথিত হইয়াছে। তাহার পর ২৭শ শ্লোকের পূর্ব্বার্দ্ধ পর্য্যন্ত (১৪শ ও ১৫শ শ্লোকে উক্ত) ভদ্রকালী, নীলা, নীলপতাকা, জলজ্জিহ্বা, করালিকা, এই পাঁচটি দেবতার মন্ত্র উদ্ধৃত হইয়াছে। তৎপরে ৩৩শ শ্লোক পর্য্যন্ত লগুড় সাধন বিহিত হইয়াছে। তাহার পরে ৪২শ শ্লোক পর্য্যন্ত অন্তরূপ বীরসাধন কথিত হইয়াছে।

সপ্তম পটল।

এই পটলে অসমর্থদিগের পক্ষে সংক্ষিপ্ত পুরশ্চরণ বিহিত হইয়াছে।

১ম—মঙ্গল অথবা শনিবার একটি নরমুণ্ড আহরণ করতঃ পঞ্চগব্য ও চন্দনাদি দ্বারা শোধন করিয়া শ্মশানে অর্দ্ধহস্ত গর্ত্ত করিয়া তাহাতে স্থাপন করতঃ তদুপরি আসন করিয়া সেই দিন রাত্রিতে একসহস্র জপ করিলেই সিদ্ধিলাভ হইবে। (এই ক্রিয়া বীরাচারসম্মত)। ২—৫

২য়—মঙ্গল অথবা শনিবার একটি শব আনয়ন করিয়া প্রথম ক্রিয়ায় উক্ত নরমুণ্ডের মত মাটিতে পুঁতিয়া তাহার উপর উপবেশন করত এক

---

* একবিংশত্যক্ষর মন্ত্রসম্বন্ধে কালীতন্ত্রের বচনই তন্ত্রসারে উদ্ধৃত হইয়াছে। দ্বাবিংশত্যক্ষর মন্ত্রের "স্বাহা" পরিত্যাগ করিয়া আদিতে প্রণব যোগ করিলেই একবিংশত্যক্ষর মন্ত্র হয়। ইহার পুরশ্চরণেও এক লক্ষ জপ।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

মঙ্গলবার বা শনিবার হইতে আরম্ভ করিয়া অপর মঙ্গলবার বা শনিবার পর্য্যন্ত প্রতিদিন রাত্রিতে অষ্টোত্তর শত জপ করিলেই সিদ্ধিলাভ হইবে। (ইহাও বীরাচারসম্মত)। ৫—৭

৩য়—কৃষ্ণপক্ষেই হউক বা শুক্লপক্ষেই হউক অষ্টমী বা চতুর্দ্দশী তিথিতে এক সূর্য্যোদয় হইতে অপর সূর্য্যোদয় পর্য্যন্ত নিরাতঙ্ক হইয়া একাসনে জপ করিলে সিদ্ধিলাভ হইবে। (ইহা পশু ও বীর উভয়েরই করণীয়)।৭—৯

৪র্থ—চন্দ্রগ্রহণ অথবা সূর্য্যগ্রহণ গ্রাস হইতে বিমুক্তি পর্য্যন্ত জপ করিলে সিদ্ধিলাভ হইবে। এই পুরশ্চরণে গ্রহণের পরে হোম, তর্পণ, অভিষেক ও ব্রাহ্মণভোজন করাইতে হইবে। (ইহাও পশু ও বীর উভয়ের করণীয়)। ৯—১১

৫ম—শরৎকালে দেবীপক্ষে চতুর্থী হইতে নবমী পর্য্যন্ত প্রতিদিন ভক্তিপূর্ব্বক দেবীর অর্চ্চনা করিয়া প্রতি রাত্রে অন্ধকারে একাকী সহস্র পরিমাণ জপ করিবে। অষ্টমী ও নবমীতে উপবাস করিবে। ইহাতেই মন্ত্রসিদ্ধি হইবে। (ইহা বীরাচারসম্মত)। ১২—১৪

৬ষ্ঠ—অষ্টমী ও নবমীর সন্ধিসময়ে অষ্টোত্তর শতসংখ্যক যুবতী স্ত্রীর পূজা করিয়া পূর্ব্বোক্তকল্পে দেবীর অর্চ্চনা করত অষ্টোত্তর শতসংখ্যক মন্ত্র জপ করিলেই সিদ্ধিলাভ হইবে। (ইহাও বীরাচারসম্মত)। ১৫—১৭

৭—বীরাচারে—রহস্য ক্রিয়াবিশেষ। ১৭—২০

৮—গুরুকে নিজালয়ে আনয়ন করত ইষ্টদেবতার মত তাঁহার পূজা করিবে এবং বস্ত্র, অলঙ্কার, স্বর্ণ প্রভৃতির দ্বারা তাঁহার সন্তোষবিধান করিবে। গুরুর পত্নী, পুত্র, কন্যাকেও পূজা করিবে। এইরূপ করিয়া মন্ত্র জপ করিলে সিদ্ধিলাভ হইবে। (এই স্থলে জপের সংখ্যা বিহিত হয় নাই। অনুক্ত স্থলে অষ্টোত্তর সহস্র জপের বিধি আছে, তদনুসারে এই স্থলেও অষ্টোত্তর সহস্র জপ করিবে।) ইহা পশু ও বীর উভয়ের করণীয়।) —২০—২২

৯ম—সহস্রবার গুরুর পাদপদ্ম চিন্তা করিয়া দেবতাভাবে তথায় গুরুর পূজা করত জপ করিলে সিদ্ধিলাভ হইবে। ২৩—২৪

প্রত্যেক ক্রিয়াই গুরুর আজ্ঞা লইয়া করিবে এবং গুরুকে যথাশক্তি দক্ষিণা দিবে। গুরুর অনুজ্ঞায় দুষ্ট মন্ত্রও সিদ্ধ হয়। গুরুর আজ্ঞা লঙ্ঘন করিলে

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

gitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalga

তান্ত্রিক ক্রিয়ার অধিকার থাকে না। গুরুর নিকট উপদেশ না লইয়া এই সকল প্রয়োগ করিলে সিদ্ধিহানি হয়। এই সকল মন্ত্রতন্ত্র শিষ্যকেও দেখাইবে না। অন্যকে দেখাইয়া এই সকল ক্রিয়া করিলে মৃত্যু হয়। ২৫—৩০

২৭শ, ২৮শ, ও ২৯শ শ্লোকে যে ক্রিয়া উক্ত হইয়াছে, তাহা প্রক্ষিপ্ত বোধে উপেক্ষিত হইয়াছে।

অষ্টম পটল।

এই পটলে সময়াচার অর্থাৎ কুলাচার উক্ত হইয়াছে। সময়াচারপরায়ণ সাধক সর্ব্বপ্রাণীর হিতপরায়ণ হইবে; কাম্য কর্ম্ম পরিত্যাগ করিবে; নিত্য কর্ম্মের অনুষ্ঠান করিবে, মন্ত্রের আরাধনা দ্বারা শিবভাবে তৎপর হইবে। সমস্ত কর্ম্ম ইষ্টদেবতাকে নিবেদন করিবে; অন্য মন্ত্রের অর্চ্চনায় শ্রদ্ধা বা অন্যমন্ত্রের পূজা, কুলাচারনিন্দা স্ত্রীনিন্দা, বীরনিন্দা, বীরদ্রব্যাপহরণ, স্ত্রীর প্রতি রোষ এবং প্রহার, এই সকল বর্জ্জন করিবে। ১—৪

এই জগৎ স্ত্রীময়রূপে এবং নিজেকেও স্ত্রীরূপে ভাবনা করিবে। বালিকা, যুবতী, বৃদ্ধা, সুন্দরী কুৎসিতা, দুষ্টা, ইত্যাদি যে কোন স্ত্রীমূর্ত্তি দেখিলেই তাঁহাকে সমাহিতচিত্তে মনে মনে পূজা করিয়া প্রণাম করিবে। স্ত্রীদিগকে প্রহার বা নিন্দা করিবে না এবং তাঁহাদের প্রতি কুটিল ব্যবহার পরিত্যাগ করিবে না। ইহার অন্যথা করিলে সিদ্ধিহানি হইবে। স্ত্রীই দেবতা, স্ত্রীই প্রাণ, এবং স্ত্রীই বিভূষণ, এইরূপ চিন্তা করিবে। × × × ×। স্ত্রীর আহৃত পুষ্প, জল ও ভোজ্যদ্রব্যের দ্বারা দেবতার পূজা করিলে অক্ষয় ফল হয়। × × × ×। স্ত্রীর দ্বেষ করিবে না ৫—১৪

মহাশঙ্খের মালায় জপ করিবে। যথারুচি মধু, মৎস্য, মাংস, তাম্বূল এবং অন্যান্য দ্রব্য ভক্ষণ করিয়া স্ত্রী বিশেষতঃ কুলজা স্ত্রীকে দর্শন ও স্পর্শন × × × করিয়া জপ করিবে। ১৪—১৬

এই আচার জপাদিতে দিক্, কাল এবং আসনাদির নিয়ম নাই। অস্নাত এবং ভুক্ত অবস্থায় মহানিশায় অশুচি স্থানে দেবীর পূজা এবং বলি প্রদান করিবে। সকল বস্তুকেই পবিত্র মনে করিবে, কোন দ্রব্যেরই শুদ্ধিবিধানের প্রয়োজন নাই। ১৭—২০

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

পূজাদিতে সর্ব্বকালই শুভ, দিবা, রাত্রি, সন্ধ্যা, মহানিশা প্রভৃতিতে কোন ভেদ নাই, সকল সময়েই জপ ও পূজাদি করিতে পারা যায়। সুগন্ধি শ্বেত লোহিত পুষ্প, বিল্বপত্র, মরুবক প্রভৃতির দ্বারা দেবীর অর্চ্চনা করিবে, তুলসী-পত্রের দ্বারা অর্চ্চনা করিবে না। ২০—২২

এইরূপ আচরণে অধর্ম্ম হইবে না, পরন্তু মহান্ ধর্ম্মই হইবে। সাধক এই প্রকার আচারতৎপর হইয়া কৃতার্থম্মন্য ও সন্তুষ্টচিত্তে জপপূজাদিপরায়ণ হইলে আনন্দময় পরতত্ত্বে বিলীন হইতে পারিবেন, তাঁহাকে আর সংসারে আসিতে হইবে না। অণিমাদি অষ্টসিদ্ধিও তাঁহার সুলভ হইবে। ২৩—২৫

নবম পটল।

এই পটলে অনিরুদ্ধসরস্বতী অর্থাৎ দ্বাবিংশত্যক্ষর মন্ত্রের ফল কথিত হইয়াছে। এই মন্ত্রের সাধনায় সর্ব্বসিদ্ধিলাভ হইতে পারে। সাধক এই মন্ত্রের জ্ঞানলাভ করিলে পাণ্ডিত্যে ও কবিত্বে বৃহস্পতি সদৃশ হইতে পারে। ইহার জপ ব্রহ্মজপ, ইহার জ্ঞান আত্মচিন্তা অর্থাৎ ব্রহ্মচিন্তা এবং ইহার সম্যক্ ধ্যানই যোগ। ১—১৬

এই মন্ত্রের স্মরণে মহাবিপৎ, মহাপাপ, গ্রহদোষ, মহাভয়, মহা উৎপাত, মহাশোক, মহারোগ, মহামোহ, মহাঅসুখ, মহাদারিদ্র্য প্রভৃতি দূর হয়। × × ×। ৭—১২

যে সাধক এই মন্ত্রের দ্বারা দেবীর অর্চ্চনা করে, সেই সুকৃতী, সেই কুলভূষণ. তাহার জননী ধন্যা, তাহার মুখে সরস্বতী, গৃহে লক্ষ্মী এবং দেহে তীর্থসমূহ সর্ব্বদা বাস করেন। সে ধনে কুবেরতুল্য, তেজে সূর্য্যতুল্য, বলে বায়ুতুল্য, গানে গন্ধর্ব্বতুল্য, দানে কর্ণতুল্য, জ্ঞানে দত্তাত্রেয়তুল্য, শত্রুনাশে অগ্নিতুল্য, পাপনাশে গঙ্গাতুল্য, পবিত্রতায় অগ্নিতুল্য, সুখদানে চন্দ্রতুল্য এবং শাসনে যমতুল্য হইতে পারে। সে কালের তুল্য দুরাসদ, সমুদ্রের মত গম্ভীর, নির্ঘাতের মত দুর্দ্ধর, বৃহস্পতির মত বাগ্মী, পৃথিবীর মত সহিষ্ণু এবং স্ত্রীদিগের সম্বন্ধে কন্দর্পতুল্য হইতে পারে। ১৩—১৯

কুলজ্ঞানপরায়ণ সাধক দুর্ল্লভ, তন্মধ্যে কালীসাধক আরও দুর্ল্লভ। দেবী বরং শিবকে পরিত্যাগ করিতে পারেন, কিন্তু কালীসাধককে কখনও

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

পরিত্যাগ করেন না। কালীর তুল্য বিদ্যা নাই, কালীর তুল্য ফল নাই, কালীর তুল্য জ্ঞান নাই, কালীর তুল্য তপস্যাও নাই। পরমেশ্বরে যে সকল গুণ আছে, কালীতত্ত্বজ্ঞানে সেই সকল গুণ লাভ করা যাইতে পারে। লতা-সাধনতৎপর কালীতত্ত্বজ্ঞানী সাধক দেবতুল্য হইয়া ক্রমে মুক্তিলাভ করিতে পারে। এইপ্রকার কালীতত্ত্ব কথিত হইল। ইহাতে সম্যক্ আস্থা স্থাপন করিয়া সাধনা করিলে সর্ব্বধর্ম্মফল লাভ করা যায়। ২০—২৫

দশম পটল।

কালী, তারা, দুর্গা, উন্মুখী ইহাঁদের উপাসনাপদ্ধতি তুল্য। কালী ও দুর্গাকে তুল্যরূপেই চিন্তা করিবে। কালী ও তারা মহাচীনক্রমে এবং শ্রীবিদ্যা গন্ধর্ব্বক্রমে শীঘ্র ফলপ্রদা! উগ্রমুখী কালী সপ্তপ্রভৃতিপ্রকারা শ্রীবিদ্যা এবং চত্বারিংশৎপ্রকারা ভৈরবী, গুপ্তসাধনে ইহাঁদের তুল্যতা। উগ্ররূপা সমস্ত দেবতাই মহাচীনক্রমে সিদ্ধিদায়িনী। যে মন্ত্রে যে আচার উক্ত হইয়াছে, তাহাতে তাহাই ধর্ম্ম, ইহাতে সংশয় করিলে সিদ্ধিহানি হয়। ইহাতে বিশুদ্ধ-চিত্ত থাকিতে পারিলেই মুক্তি লাভ। ১—৯

এখন দক্ষিণা কালীর একাক্ষর মন্ত্র কথিত হইতেছে। ককারের সহিত রেফ, দীর্ঘ ঈ এবং নাদ বিন্দু যুক্ত হইলেই একাক্ষর মন্ত্র হয়। এই মন্ত্রের নাম কালিকাহৃদয়, ইহাও সিদ্ধবিদ্যা। একাক্ষর মন্ত্র তিনবার পাঠ করিলে ত্র্যক্ষর মন্ত্র হয়। এই মন্ত্রের দ্বারা বিদ্যালাভ, আকর্ষণ, বশীকরণ, উচ্চাটন, মারণ, শান্তি, পুষ্টি, প্রভৃতি কর্ম্ম সাধিত হয়। ইহার তুল্য মন্ত্র আর নাই। একাক্ষর এবং ত্র্যক্ষর এই উভয় মন্ত্রের ধ্যান পূজাপ্রভৃতি সমস্তই দ্বাবিংশত্যক্ষর মন্ত্রের মত। এই দুই মন্ত্রের পুরশ্চরণেও লক্ষ জপ! ১০—১৭

আকর্ষণে রক্তপুষ্প, স্তম্ভনে পীতপুষ্প এবং মারণে কৃষ্ণপুষ্প দ্বারা কালীর পূজা করিবে। ১৯ শ শ্লোক হইতে ২২ শ শ্লোক পর্য্যন্ত একপ্রকার আকর্ষণ, এবং ২৩ শ শ্লোক হইতে ২৬ শ শ্লোক পর্য্যন্ত অন্যপ্রকার আকর্ষণ বা বশীকরণ উক্ত হইয়াছে। ১৮—২৬

এখন ষড়ক্ষর মন্ত্র উদ্ধৃত হইতেছে। প্রথমতঃ প্রণব, তৎপরে হৃল্লেখা (হ্রীঁং), তদনন্তর রতিবীজ (ক্রীং), তৎপরে একারযুক্ত পবর্গের পঞ্চম বর্ণ, শেষে

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

স্বাহা। এই ষড়ক্ষর মন্ত্রও কালীহৃদয় নামে অভিহিত। এই মন্ত্রের ঋষি মহাকাল ভৈরব, ছন্দ বিরাট, দেবতা "সিদ্ধকালী ব্রহ্মরূপা ভুবনেশ্বরী" * বীজ ক্রীং, শক্তি হ্রীং। ওঁ হ্রাং হৃদয়ায় নমঃ ইত্যাদি ক্রমে অঙ্গন্যাস করন্যাস করিবে। ২৭—৩২

দেবীর ধ্যান এইরূপ—শবরূপ মহাদেবের উপরে অবস্থিতা, মহাদেবের হৃদয়ে বাম পদ এবং উরুদ্বয়ে দক্ষিণ পদ। দেবী নীলোৎপলের মত নীলবর্ণা। দ্বিভুজা, দক্ষিণ হস্তে খড়্গ ও বাম হস্তে পানপাত্র কপাল। দক্ষহস্তস্থিত উর্দ্ধমুখ খড়্গের দ্বারা যেন উদ্ভিন্ন চন্দ্রমণ্ডল হইতে গলিত অমৃতধারা দেবীর সমস্ত শরীরকে আপ্লাবিত করিতেছে, তিনি বামহস্তস্থিত কপাল হইতে যেন অমৃত পান করিতেছেন। দেবী ত্রিনেত্রা, মুক্তকেশী, দিগম্বরী এবং ললজ্জিহ্বা। কটিদেশে নরকরসমূহের কাঞ্চী অর্থাৎ চন্দ্রহার। কর্ণদ্বয়ে চন্দ্রসূর্য্যশোভমান কুণ্ডলদ্বয়। মণিময় মুকুট প্রভৃতির দ্বারা দেবীর দেহ সুশোভিত। ৩৩

এই ষড়ক্ষর মন্ত্রের একবিংশতিসহস্রজপে পুরশ্চরণ। ত্রিকোণ কুণ্ডে তাহার দশাংশ অর্থাৎ একবিংশতিশত হোম। ইহার পূজাপ্রয়োগ দক্ষিণাকালীর একাক্ষর মন্ত্রের তুল্য। এই মন্ত্রে রক্তপদ্ম দ্বারা হোমে কুবের তুল্য ধনী, বিল্বপত্র দ্বারা হোমে রাজ্যলাভ, রক্তপুষ্প দ্বারা হোমে জগদ্বশীকরণ, পীতপুষ্প দ্বারা হোমে স্তম্ভন, মালতীপুষ্প দ্বারা হোমে বৃহস্পতি তুল্য বিদ্যালাভ, এবং কৃষ্ণপুষ্প দ্বারা হোমে শত্রু মারণ হইতে পারে। এই সকল হোমের সংখ্যা দশ হাজার। এই মন্ত্রের সাধনে মহাপাতক নাশ হয়, সাধক খেচরতা লাভ করিতে পারে। ৩৪—৪০

একাদশ পটল।

এখন কালীর সামান্য সাধন কথিত হইতেছে, ইহাতে সমস্ত বিপদ্ দূর হয়। সর্ব্বসিদ্ধিকামী সাধক মহা উৎপাত, মহাভয়, দারুণ কোন গ্রহদোষ, মহাবিপদ, মহাযুদ্ধ, দারিদ্র্য, দুঃস্বপ্নদর্শন ইত্যাদি দোষশান্তির জন্য এবং বশ্যকর্ম্মে স্বস্ত্যয়নে অভিচারপ্রশমনে উপদ্রবনাশে যুদ্ধপ্রশমনে শত্রুনিবারণে রাজ্যভয়শান্তিতে ও রাজক্রোধপ্রশমনে শিবাবলি প্রদান করিবে। যে সাধক মঙ্গল-কামনায় শিবা-

* সিদ্ধকালী ব্রহ্মরূপা ভুবনেশ্বরী দেবতা দক্ষিণা কালীরই রূপভেদ।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

gitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalga

বলি প্রদান না করে, তাহার কৌলমার্গে দেবীর অর্চ্চনায় অধিকার হয় না। ১—৬

কৌল সাধকের অবমাননা করিবে না, তাঁহার পূজা করিবে। কৌল প্রসন্ন হইলে কালীসান্নিধ্য লাভ হয়। যে কৌলমার্গ অবগত হইয়া তদনুসারে দেবীর অর্চ্চনা করে সে ধন্য। কৌলমার্গ ভিন্ন কালীর অর্চ্চনা করিলে স্বর্গ অথবা মোক্ষ লাভ হয় না। কালীপূজায় আয়ুঃ, আরোগ্য, ঐশ্বর্য্য, বল, পুষ্টি, যশঃ, কবিত্ব, ভোগ, মোক্ষ, এই সকল লাভ হয়। ৭—১০

কবিত্ব লাভের জন্য দেবীকে শুক্লবর্ণরূপে ধ্যান করিবে, এইরূপ স্তম্ভনে পীতবর্ণ, মারণে কৃষ্ণবর্ণ এবং শত্রুনিগ্রহে ধূম্রবর্ণরূপে ধ্যান করিবে। সাধক এই মন্ত্রের দ্বারা কোন পাপীকেও যদি স্পর্শ করে, তবে সেও অনর্গল সুধাময় বাক্য বলিতে সমর্থ হয়। সর্ব্বধর্ম্মফলপ্রাপ্তির জন্য কুমারীপূজা করিবে। ১১—১৩

১৪শ ও ১৫শ শ্লোকে শত্রুনিগ্রহের একটি প্রয়োগ কথিত হইয়াছে।

এই সর্ব্বসিদ্ধিপ্রদায়ক কালীমত উক্ত হইল, ইহার দ্বারা সকল অভীপ্সিত বিষয়ে সিদ্ধিলাভ হইতে পারে। কালকে নিয়ন্ত্রণ করেন বলিয়া ইঁহার নাম কালী, ইনি জ্ঞানিতত্ত্বপ্রদায়িনী, এই জন্য ভোগ ও মোক্ষ এই উভয় কামনায় ইঁহার আরাধনা করিবে। ১৬—১৮

ভৈরব কর্ত্তৃক এই দিব্য কালী মত প্রকাশিত হইয়াছে। ইহা কাহারও নিকট প্রকাশ করিবে না, করিলে সিদ্ধিহানি হইবে। কেবল ভক্ত ও জ্ঞানী সাধকের নিকট প্রকাশ করিবে। ১৯—২১

সমাপ্ত

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgao

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

विज्ञापनम् ।

संस्कृतसाहित्य-परिषत् ।

(Registered under act XXI of 1860)

श्यामबाजार, कलिकाता ।

उद्देश्यानि—संस्कृतभाषायास्तन्मूलकप्राकृतादीनाञ्च सम्यग् आलोचनया प्रसारप्रतिपादनम्, तदर्थम् अवलम्बितानि साधनानि—

१ । प्रतिमासं नियमेन व्यवस्थापितायां विद्वत्समितौ संस्कृत-भाषया विविधविषयेषु प्रबन्धानां पाठस्तत्समालोचनञ्च ।

२ । परःसहस्राणां विपठिषूणां कौतूहलपूर्त्तये सौकर्य्याय च हस्तलिखितानां भारतान्तस्तद्बहिश्च मुद्रितानां पुस्तकानां समृद्धः सञ्चयनम् ।

३ । संस्कृतरूपकाणामभिनयः ।

४ । परिषद्भवने स्थापितायां संस्कृतपाठशालायामुपाध्यायैः प्राचीनरीत्या विद्यार्थिनामध्यापनम् ।

५ । प्रतिमासं संस्कृतसाहित्यपरिषत्पत्रिका-प्रकाशः ।

६ । भाषान्तरनिबद्धानामुत्तमपुस्तकानां संस्कृतभाषयानु-वादनम् ।

७ । अमुद्रितानां पुस्तकानां प्रकाशनम् ।

विशेषा लेखयोगेन ज्ञेयाः ।

---

१२ नं श्यामबाजार ब्रिज रोड इहते सम्पादक कर्तृक प्रकाशित ।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

संप्रदाय संकरशा विनासाथ महेश्वरी ॥
संप्रदायस्थापनार्थं सदातीव्रती पार्वतीय
दक्षीराणका तेका देहा दुत्पन्नादशकाहिता।
दक्षीराण कारते कादेहा दुत्पन्नासो ऽ सौवहााद
याश्री वीघेती वीरव्याता कादेहा दीश्वर पी
राी ॥ ७ प्रेचार कासुर से ग्रामे से जाता भैरवा
पुरा तै सम्पन्न प्राय्यौ तानाहे संज्ञा तामेरवी
कहां ॥ ८ मारसुर वधायापि जाताधूमाव
तीकहा ॥ ८ ॥ पयाकातीत या तारा छिन्नम
स्तात पैवव श्री नीघाऽन्तु वगला कमहा

वगलाऽजा ॥ ९ ॥ महाकाताद्रु वेनायासा
प्रोक्ताभुवनेश्वरी ॥ काहि देहा तसमुत्पन्ना
वाऽतासा कुहसुंदरी ॥ १० ॥ याकुमारी शी वा
सम्मोहु ऽक्षिर वृ यावीता पुरा ॥ सावाहास्
मीनाम्नी दशविद्या ऽ मास्मृता ॥ ११ ॥ काली
ताराछिन्न मस्ता सुंदरी वगलारमा ॥ मातंगी
भुवनासिद्धी विद्यां वभैरवीत धाय्युमावती
दशमी महाविद्या दसस्मृतादशाविद्याऽ
संभूता एक पेवा शादैरीता ॥ नामानीता
भूता एकपेवाशाद ैरीता ॥ १२ ॥ वक्तुंन
साप्युना समा करोय पार्वती ॥ १२ ॥ वक्तुं न

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

सक्तो महीमा यस्या नर्जो युते रपी ।। पावा
मते वृ तोद्धारा ड्रामरे पा प्रकीर्तीता ।।१३।।
मिमातंत्रे चन्व याप्रोक्ता या प्रोक्ता केहीका
रा वे ।। देव्या स्ताएन प नृा श न महावीद्या
प्रकीर्तीता ।।१४।। प्रादौ जै या महालक्ष्मी ततो
वागीश्वरी मता प्रश्वारू ७ ।। च मातंगीनी
त्पनुत्री वा तत परम्र ।।१५।। भूवनेसी ततो छ्री
ष बांडाही भैरवी तत ।। धूहीनी च न दुर्गा च
त्रीपुरा त्वरीता तत ।।१६।। प्र घेराज पत क्ष्मी च
वज्र प्रस्तारीशाति थी ।। पंडा च त्पन पुराश च

श्रीं गुरो स्यपंनमः ।। प्रयन्ना ही का गमे दक्षीणा
काहीरखंड ।। देव्यु वाच ।। देवदेव महादेव स
र्वज्ञः परमेश्वरः ।। दक्षीणा कालीका देव्या श्रुतं
वाग्मनमंजुत ।।१।। सारात्सारतरं तंत्रं भईं
शात्त सरव्य बं मया प्रबृ नाश्नो तु मीक्षामीते
स्सारतरं विभो ।।२।। महादेव उवाच प्रस्ता
दिवा हुपार वीतें तन्त्रं वक्ष्ये महातनं दक्षी
णा काली का देव्या सर्वस्वागमसंज्ञकं ।।३
यद्दत्वा साधक श्रेष्ठो नीषेश ज्ञो भवेद्ध्रुवं ।।
तंत्रे षु काहीका तारा संप्रदायाः प्रभेव च ।।४।।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

तद्दीं कुसुमवेन्मायात न्मनासा शिवु शिवं॥
सृतीउत्पादना पैतु मर्तृरूपं प्रकृत्यपपात॥८२
विपरीतरतींकृत्वा महाकुम्पविश्वापवक्रीशद
र्दघंट वृन्दपं मा शांतमपद्मकोटय॥८८॥
पृगानी परमे शानी विपरीतानीवैम वेत॥वी
परीतरतौ देवी विद्धरेकौ मबत्पुरा॥८५॥ तत्रो
कासुमुखीजाता महाकालाववराप काहीका॥
ता वितोका महाकालो महामोहपरापरा॥८६
कालीं प्रतीवदात्काले बालीगवैान्कीलां परामं।
हंलजोहि मम्मनादे इतिपेव वचनं वदेत॥८७॥

उवाचसुंदरीकालो महाप्रारापूिये पो प्रये इह
शं वचनं श्रुत्वा नीर्ग्रिरा परचोडीका॥८८॥का
लस्पमायां दत्वा तु स्वयं व्यापारतो गता॥का
लस्तु चकीतोजातसावैकुत्रगतापृिया॥८९॥
दर्शनाायै तपस्तेपे पंचाशत्पद्म कोटय॥
पृगानीतत्र याता नील काहीदर्शनं शिवे॥९०
कात्पाज्ञातं महेशानी मार्गच्युती परापरा
॥तदा स्वमनसा बाह्यां शक्तिं कृत्वा महेश्वरी
॥९१॥ प्रानीपद तावालस्प मार्ग व्यासाचि
मेवतु॥ मार्गा किना महेशानी गतीरत्रकथं

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

भवेत् ॥५२॥ मनुष्याणां कुण्डलीतु सार्द्धत्रीवलया भवेत् चतुर्वर्णाम्बिका जातु त्रीवर्णाचत्रीशक्तिका ॥५३॥ एकैकवर्णो ब्रह्मणु ध्यातु एक पंचाशदीरीता ॥ महालक्ष्मी समारम्भ महाकामकलान्तिका ॥५४॥ कामदेहात्समुत्पन्ना महाविद्याइमाम्मृता ॥ एकैकं विद्ते जाता मातकार्णा महेश्वरी ॥५५॥ वेदादौ सर्वशास्त्राणि जाता ह्येव ह्यनेकस्यकवाक्यशस्त्रया पंचीतं पश्च तस्मात्के प्रधानता ॥५६॥ प्रवीना शाश्वताये नतेन ताक्षरस्वरूपता ॥ कदीमा पातु सा शक्ती विवाद प्रतीविंवत ॥ ५७॥ का

सि.दा परा ॥ चतुर्णा भवेश्वरी विद्या वाचाती तापरा कला ॥३७॥ महाप्रलयमासाद्य महाब्रह्माराडनायका शीवशक्ती मयं देह एकीकृत्य सदास्थीता ॥३०॥ कोटीब्रह्मा भवाद्यास्तु ब्रह्मा राउ प्रेतरस्पीर्शीः तत्र सानो प्रनृ जन्तीगाप नृत्ते ध्यानसे कुता ॥३८॥ माहेश्वराणी चानन्त विष्णुरूपेण्यनन्तता ॥ तत्तीक्षती देवेसी चतुर्वेदशवास्मृता ॥४०॥ युगश्च शवरूपेणा सप्रेतगृता परा ॥ सामरस्यस मासाद्य शवरूपादि पावतो ॥४१॥ चीद्व्यापक स्वरूपेणास्व पंचविभूती कृता ॥ एतस्मीन्नोवकाहेतु स्वविंवंपस्पती रीवा ४२

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

पातैसौतम रीवै ॥६२॥ तत्रस्थापरमेशानी
सौंदर्येगुणसंयुता, प्राप्याऽभीष्टगुणाकाली
कोटिपासुंदरीस्मृता ॥६३॥ न वात्मेकेश्वरी
विद्यासैवान्नपरी कीर्तिता ॥ कालीदेहात्समु
त्पन्ना कोटिब्रह्माण्डनायका ॥६४॥ तदुज्ञानं
मंत्रयोगेन स्फुटं भवतीपार्वती ॥ प्रत्ययोगे
समारब्धे स्त्रीसंगश्चेद्यदा भवेत् ॥६५ विना
शाक्ताप्युरोधस्याद्देहनाशादिकं भवेत् ॥ मंत्र
योगेभावनायांनतयापरमेश्वरी ॥६६॥ क
लौयुगे सम्प्रायाते नसमाधीर्नयोगता: ॥ य

दियोगोत्र संजाते फलं तत्र न विद्यते ॥६७॥
मन्त्रयोगं समभ्यसेत् नाम्रशतगुणांस्तोत्रं
ध्यानं तस्मात् तांत्रिकं ॥६८॥ तस्मात् कृता
धीकं मंत्रं कवचं तत्कृतांत्रिकम् ॥ ननु वै
कविद्योदिनी प्रभुरवीकृत्यशाश्वतम् ॥६८।
कोटिब्रह्माण्डपर्यन्तं ब्रह्माराव: सन्तीयोहके
प्रनन्तकोटिब्रह्माण्डनायकाकालशारदा १०
ब्रह्मयोहं च तदच्छसुंदरीयोधरं भवेत् ॥
भुयोतपरमेशानीभुवनायोचरं भवेत् ७१
महाविद्याकोटिसंख्यातन्मध्येयोहयोवं
ता ॥ हीसुन्दहृसुंदधेश्वे व पार्वती ॥ ७२॥

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

तस्या द्वारि महेशानी सर्वतोक्षती पार्वती ॥ ना
सज्ञाता दीव देवी पंचा मायाह नेकशः ॥ १३ ॥
तथैव नीर्मीति देवी काली काज्ञानुस्मारतः ॥ प्रत्प
हं कुपते पपत्त सर्वे काली काय्रत ॥ १४ ॥ गत्वा
वक्षते देवीसुं दर्पानी त्वमे वतु ॥ वतुर्युग
सहस्राणी ब्रह्माहु परी कीर्तीतिः ॥ १५ ॥ त्रीं शद्भि
स्तु भवेन्मास द्वादशै वत्सरं भवेत् ॥ एवं ही
शत वर्षाणी ब्रह्मायु परी कीर्तीत ॥ १६ ॥ विष्णी
नाद श सहस्रं । विष्णोर्देवीहाईरीत ॥ पद्मापा
सादीवर्षाणी ज्ञातव्यं परमेश्वरी ॥ १७ ॥ दस
साहस्रवर्षाणी । विष्णोराय प्रकीर्तीत ॥

तीव्याप कसन्धा पा महाकाल प्रकीर्तीतिः ॥
महाकालाद्वे न्मो पासा प्रोक्ता भूवनेश्वरी ५८
ब्रह्मा वैष्णा दयो देवी तं तोत्पन्ना महेश्वरी ॥
आद्या कृष्णा महाकाली द्वीती पासुं दरीस्मृता ॥
॥ ५९ ॥ रत्नवरा महेशानी तृतीया वाल भैरवी
॥ चतुर्थी पंचमी नीया पस्या भ्यासना तु काह
त ॥ ६० ॥ प्रपंच मुक्ता सा शक्ती श्री विद्या परीकी
र्तीता ॥ तन्मायापार रूपधा रीत्वं प्रपंचात्मा रै
वो भवेत ॥ ६१ ॥ त्रीने त्रा त्री गुणा जाता त्रीगु
णात्मात येश्वर ॥ तत शदा री वो जाता. तत्कु

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

तत श्चैव वसुदारीवं ततोहि दंडीनी मध्य
मंत्रीराज्ञं वागृहं ततः ॥२३॥ जरापरं तत प्रोक्तं तत
श्चैव परात्परं परातीता तत प्रोक्ता चीत्परात्प
नन्तरं ॥२४॥ संहर्मं श्री पुरं देवी तद्दूर्ध्वं को
टी योजनं ॥ चतुरस्त्रं कोटीलक्षं योजनं तारीणी
पुरं ॥२५॥ नवप्राकार संयुक्तं प्रनन्तायामवि
स्तृतं कालं चक्रं तत्र देवी कालनीत्या क्रमे
शानु ॥२६॥ कालनीत्या पुरे देवी श्रीचक्रं परी
तीविकृतं ॥ तद्बाह्ये तु महाश्मशानी नीवा रातिव

पुरं भवेत ॥२७॥ तद्बाह्ये तु महाश्मशानी साभवां
तप पुरं भवेत ॥ तद्बाह्ये राजसं देवी शस्पतीता
कलापुतं ॥२८॥ चतुष्क । रीवसंपुक्तं पर्यं
डं पसदा रीव ॥ तत्र कालं प्रवर्तातीतं महाका
लेश्वरं परमं ॥२९॥ तत्पज्जं महाश्मशानी शा
स्पतीतां परां कलां ॥ नानातंत्रं शिवरीः श्व
वा कोटी ब्रह्मा राउ नायीका ॥३०॥ सर्वोत्तेत द्व
त्रासाडं कीर्तितं परमेश्वरी ॥ कला प्राकार सं
युक्तं श्मसानं तत्र पार्वती ॥३१॥ प्रत्याहीठ
पदारूढं तत्र श्रीतारीणीपुरं ॥ चतुरबाही

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust, Funding IKS-MoE Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

१०) शु... शीस्म रक्षि। शोदक्षी
शा स्म शा नं च स्मा शाना ष क तत्पुर: परी
तो देवदे वेसी शत द्वार समन्वीत ॥ ८३॥ कोटी
ब्रह्माराउ प्रेतै स्तु पेर वीजरासें पुतम्र॥ त्रीं
श त्रीरवले चर पद्म शर मे संपुतं। शीवे॥ ८४
महाद्वा हा नहै दौ ह्रै नेडवी न्दुर्व भुषीत
न॥ सप्त लैतगता वा हो दक्षीराा तन्त्र ती
ष्टती॥ ८५॥ दर्शनन्त्री तयं देवी काही वीधा
प्रजो वरम्र॥ प्रने कानीहो देवेसी ब्रह्मारा उ
नीच माध्यत॥ ८६॥ तस्योपरी मह शानी ब्रह्मा.

हक्षा पुष्प। शीवस्या पी त द्वैग्र राप महेश्वरी। ७८
शदाशी वत द्वाव कं स्वसार् व क्रं तदुत्त रम॥
विराट् व क्रं त द्वीग्रा सा सर्वराट् द्वीग्र राा तत। ७९
ततस् न्या परासं पा शी महासुन्दरी कहा॥
महा शून्यास्तत तारा: त द्वै गुरत्पन्ना पेरा व। ८०
पंचशून्ये स्थिता तारा सर्वा ते कालीकारगी
ता॥ एव वी महाशून्ये महा दक्षीराकाही
का॥ ८१॥ व्यापतीष्ट्ती देवो से शून्यं कण्ण
स्वरुपकं॥ ब्रह्म विष्णु । शी वा दीना ततो हो
का प्रकीर्तीता॥ ८२॥ इत्र राख्ये स्तता देवी

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

सर्वं तु आसने सुखमम् ॥२॥ कुर्गा भी पे व पुत्रका नां
रात्री पातप्रजापते ॥ प्रयोगपस्या पि काहेन काही
वीघ्यातरस्य च ॥३॥ वतु बंधी विधोदे वे रात्री
पातोम वेक्रम ॥ नीत शारस्वतेत्तं वे पं च ॥ परी
की तींती ॥४॥ श्रीसुन्दर्या महेशानी शक्ती पा
तोच ताम वेत ॥ वे ष्णवाघाम दवी शांती
पातस्तपं चधा ॥५॥ त्रापा विजादी के दे वी
रतीबीजादी कोरी वे ॥ प्रशा नस्य सम्भू स्पती
वेतते प्रीपचादीनी ॥६॥ रचार सुमहे शा
नी काली का सबकलामनु ॥ काली काम कहा
देवी मत्स्याहं संगंता मवेत ॥७॥ परा स्वस्च
पं

परद्रव्यं त पे व च प्रतीग्रह ॥ परस्त्रीपरनीदा
च मनसापि वीवर्जयेत ॥८॥ एतैर्दोसै समायु
ता नैव सीध्यन्ती साधका ॥ पदीकादी मतं चै
व वर्तते प्रीपचादीनी ॥९॥ तदा पुमासः सर्वे
पि महाकाल स्वरूपिणः ॥ सर्वस्त्री पो महेशा
नी कालीतारास्वरूपा स्मृता ॥१०॥ एवं वुधी यदा
वेत्पात्रहीसे सार कल्पना ॥ अन्योन्य पदीमी
दान तपेका च प्रजापते ॥११॥ तदेव तासुसी
द्ध पे कालीकां तारीरणी पजेत ॥ प्र घवे वेदाधी
पात्रीश्रीमहाकाली महापरा ॥१२॥ विना काली
वि नातारां ना पवें गा बीधी क्वीत ॥ के र हे

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

कालिका प्रोक्ता क[illegible]रे त्री पुरामता ॥१३॥ ओ
ऽ तारेती सं प्रोक्ता शैवलो कोन्तरा मे वेत ॥ प्रप
कालो वे रते च त्री पुरासा प्रकीर्तीता ॥१४॥ का
स्मीरे तारीणी वाला ओड् काली प्रकीर्तीता ॥ कौ
विचा काली काता त्री वीर्धो पासको शैवे ॥१५
मेरु संसाध नां देवी दिक्षायां परीकीर्तीतं ॥ ते
नभे दादीवीज्ञानं श्री महासिद्ध शैवके ॥१६॥
काली कामाप तंत्रे चु उर्ध्वा म्नाये प्रकीर्तीत ॥
काली तारावीधौ देवी नीत्यास्थाने मञ्जपेत ॥१७
कलौ पापसमाकीर्णे समाधीन योगता ॥
यदी योगो भवेदं वी [illegible]हीत [illegible] फलं भवेत
॥१८॥

राउ काली कालुती ॥ दिवारात्री म्रहे शानीश्चरा
सां षष्ठी नाडी मी ॥८२॥ देवतानां म्रहे शानी हाव
नेदिन मुच्यते ॥ काली का पा म्रहे शानी षष्ठीर्य
पेतु नाडीका ॥८८॥ नाडि[illegible] मीदे वात्र दिव
सपरी कीर्तीत ॥ एवं क्रमे रात्रे रात्री सर्व दारु
पमस्थ[illegible]गा ॥८९॥ प्रवीनास्मी सदा स्था ता काटी
व्रह्मा राउ चवै राा ॥ काली वीधो पासक स्तु कहु
पुजा वीधौ शीवे ॥१००॥ जन्तव्य यत्नाहो देवी
नान्यत्र प्र व्रजेत क्वचीत ॥ अन्यत्र यंगीग वे
तु यदु श्रीके भवे च्छीवे ॥१॥ उच्छीवत पराद वी
देवतासा प भाव पुण्यात ॥ पुराणं भीषे कफ्कानो

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

[illegible] ॥

स्त्रीपुत्रभ्रातृसंयुक्तः धनधान्यसमन्वितः ॥१॥

सत्यप्रादात् कुरुक्षेत्रे सर्वस्वं विधिनाऽद्य ॥

महापर्वसु विप्रेभ्यो दरिद्रेभ्यो पिपासितः ॥२॥

ततो वहुतिथे काले स्वस्थानं प्राप्य वाहुज ॥

सत्वकारमहापापप्रभावेनोर्थस्य गौरवात् ॥३॥

ग्रयकेनापि विप्रेण स्थापितं तद्गृहे धनं

घटस्थं न पुनर्दत्तं तस्मै लोभाच्चतद्वसु ॥४॥

प्राप श्चिन्तोद्यतः सोऽपि प्राप्तो मृत्यु वशंतदा

सम्भुक्त्वा पापपुण्यतीर्थफलं तत्र रवजेश्वर ॥५॥

सर्वस्वदानात्प्राग् अत्र जातश्चाण्डकुले महान् ॥

चिरं मत्र [illegible] जातो वृक्षस्य भक्षणात् ॥६॥

जीरोम [illegible] रूपा [illegible] मन्त्राविद्रकपित्तभाक् ॥

धर्मज्ञो नीतिविद् विद्यास्त्री पुत्रसुखसंयुतः ॥७॥

ताद्युर्दयालुर्विख्यातो वहूनां हितकारकः ॥

[illegible] फलं त्विह ॥

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

वत्स पाकसमुदाये तेस्मृताः पापावोना ॥

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

लक्षाणां श्रेणिराढ्यस्य शृणु पापविशोधनं ॥९

लक्ष्मीनारायणं कुर्यात्सौवर्णं द्विपलात्मकं ॥

समुल्लिख्य शुभे पत्रे तदर्धमितकं तथा ॥१०॥

तल्लिंगमंत्रैः सम्पूज्य षोडशोपचारकैः ॥

दद्याद्विप्रवरायैव पूर्वपापापनुत्तये ॥११॥

शिवं च तन्मितं दद्यात्सपत्निकं सुतान्वितं ॥

शतैः पलैस्तु ताम्रस्य घटं दद्यात्तदर्धकं ॥१२

वा स्वर्णस्य घटं [illegible] कत्या गोघृतेन प्रपूरितं ॥

दद्याद्धेनुं [illegible] ब्राह्मणाय प्रत्नखा[illegible] विनाशनं ॥१३॥

गायत्र्या लक्षसहस्रं तु तद्दद्याद्द्वारं जपेत ॥

त्र्यम्बकं द्विगुणं चापि सर्वपापविशोधनं ॥१४॥

होमयेच्च तिलाज्यैश्च तथा ब्राह्मणान्भोजयेद्बहून् ॥

एकादशसहस्राणि पश्चात्कुर्याच्च पार्थिवान् ॥१५॥

दद्यात्सुवर्णभौमं च सर्वदोषोपशान्तये ॥

ममजन्मादिने सूत्रव्रतं कुर्याद्विधानतः ॥१६॥

अनेन विधिना यस्तु कुर्यात्पापविशोधनं ॥

अशीतिमितवर्षान्तं जीवनं कथितं त्विह ॥१७॥

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry